आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2017-2019

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जन संवाद का पाक्षिक

वर्ष 3 | अंक 19 | उदयपुर सोमवार 15 अक्टूबर 2018 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

याद आई 12 नवम्बर 1986 की वह गवरी

– डॉ. विद्याविन्दुसिंह –

इन दिनों मुझे महेन्द्र भैया ने 12 नवम्बर 1986 को टीआरआई, उदयपुर में आयोजित गवरी कार्यशाला की याद दिलाई। निदेशक डॉ. नरेन्द्र व्यास का निमंत्रण मेरे लिए अतीव सुखद रहा। सोचा, इसी बहाने उदयपुर के मित्रों

तथा अन्य भागीदार विद्वानों से मिलना हो जायेगा और गवरी दर्शन-प्रदर्शन भी देख लूंगी जिस पर महेन्द्रजी ने शोधग्रन्थ लिख पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी।

इस कार्यशाला का मेरे मन पर गहरा प्रभाव पड़ा और यह धारणा भी बदलनी पड़ी कि वहां सैद्धांतिक चर्चाएं और विचार-विमर्श तक ही सबकुछ सीमित नहीं रहा अपितु व्यावहारिक पक्ष को भी बड़ा उपयोगी समझा गया और कुछ अच्छे निष्कर्ष भी दिये। जिन आदिवासियों ने गवरी नृत्य को अपने भीतर जिया उनके प्रदर्शन ही नहीं देखे, गवरी के सम्बन्ध में उनकी धारणा और कथा-कथन के माध्यम से यह जानने को मिला कि उनका ज्ञान शास्त्रीय ज्ञान से कहीं अधिक गहरा, प्रामाणिक और भोगा हुआ जीवन्त इतिहास का असल स्त्रोत है।

उनके लिए गवरी एक अनुष्ठान, एक धार्मिक कार्य है। उनके मुख से सुनने से पता चला कि मूल कथा का केन्द्र बिन्दु शिव-पार्वती के चतुर्दिक घूमता है जिसमें भस्मासुर छल से शिवजी को प्रसन्न करके उनसे उनका भस्मी कड़ा मांग लेता है। वह शिव के उदार भोलेपन का लाभ उठाना चाहता है। पार्वती को उनसे छीनकर अपनी बनाने के लिए शिव को भस्म करना चाहता है। भस्मासुर पार्वती रूपधारी विष्णु की भस्मासुर हर शर्त मंजूर कर लेता है और उसके कहे अनुसार अपने सिर के ऊपर से हाथ ले जाकर दाहिने हाथ से बांया कंधा और बांये हाथ से दायां बंधा छूने के लिए तैयार हो जाता है जिससे वह स्वयं ही भस्म हो जाता है।

गवरी में नाथ पंथ के आदि पुरुषों का भी उल्लेख मिलता है। इसमें शिव के अतिरिक्त राम, लक्ष्मण और कृष्ण का कथानक भी आता है पर सम्भवत: मूल रूप विष्णु से ही उसका विस्तार हुआ है।

गवरी को समझने के लिए मानव शास्त्र, इतिहास, समाज शास्त्र, पुरातत्व, नाट्य शास्त्र सबमें गहरा पैठना होगा। जब हम प्रकृति से जुड़ाव की बात करते हैं तो उस दृष्टि से भी इस पर विचार करना होगा।

गवरी में नर्तक एक-दूसरे को हाथ नहीं लगा सकते। एक पुरुष स्त्री वेश में साथ नाचते दूसरे पुरुष को स्पर्श नहीं करता क्योंकि पार्वती को विष्णु माता मानते हैं इसलिए जब दो राई

नाचती है तो वे भी एक-दूसरे का स्पर्श नहीं करती। गवरी में एक ही गांव के लोग होते हैं जो दूसरे गांव में खेलने जाते हैं और दूसरे गांव के लोग उनके गांव में खेलने आते हैं।

इस प्रकार गवरी सम्पूर्ण जीवन को जोड़ने की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। भस्मासुर असत् का प्रतीक है। वह आज भी है। गवरी समसामयिक घटनाओं को भी विविध कथानकों के माध्यम से अपने में समेटती हुई चलती है। गवरी में नया क्या है और पुराना क्या है, इसकी कोई विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती।

इस कार्यशाला में वयोवृद्ध भील नाथूबा तथा धन्नाजी ने जो कथाएं सुनाईं उससे सभी स्तंभित रह गये। हमारी तरह ही उन्होंने कुर्सी पर बैठकर माइक से जो धारा प्रवाह सुनाया वह उनका पहला मौका था ऐसी महफिल देखने और बोलेने का भी उसके लिए पहला अवसर था। मैंने इतने प्रबुद्ध ज्ञानीजनों के साथ उन्हें देखा मगर उनमें किंचित भी अपने को छोटा मानने का भाव नहीं था।

इस कार्यशाला में रूपायन संस्थान बोरूंदा के निदेशक कोमल कोठारी, राजस्थान संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष मंगल सक्सेना, भारतीय लोककला मण्डल के निदेशक डॉ. महेन्द्र भानावत, इतिहासविज्ञ स्वरूपसिंह चूण्डावत, भवाई नर्तक दयाराम भील, हस्तलिखित ग्रन्थों के अध्येता डॉ. पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, कलकत्ता से फोकलोर पत्रिका के सम्पादक शंकर सेन गुप्ता, पूना की लोकसंस्कृति विशेषज्ञा बहिन मालती शर्मा, डॉ. प्रकाश नलिन, राजस्थान साहित्य अकादमी के निदेशक डॉ. हरीश, साहित्यकार डॉ. भगवतीलाल व्यास, टीआरआई के उप निदेशक रूपसिंह भील, निदेशक डॉ. नरेन्द्र व्यास, लखनऊ के प्रख्यात चित्रकार देवनारायणसिंह, प्रवक्ता श्रीमती

बैठे हुए- डॉ. भानावत, कोमल कोठारी एवं मंगल सक्सेना। पीछे खड़े- देवनारायणसिंह, डॉ. विद्याविंदुसिंह, मालती शर्मा एवं अनिता ब्राण्डन।

अनिता ब्राण्डन, भगवानलाल कच्छावा आदि को सुन मुझे लगा कि गवरी की मनोभूमि सम्पूर्ण चराचर की मनोभूमि है।

यह भी कि किसी भी परम्परा में परिवर्तन स्वाभाविक है। टूंटिया, खोइया, नकटौरा महिलाओं को घुटन से मुक्ति देते हैं। महिला समुदाय में प्रचलित ऐसी प्रथाओं को प्रोत्साहन देना चाहिये।

लोकनृत्य अपने भीतर की लय को पहचानने की चाह और कोशिश होते हैं। ये दृष्टि, कर्म और गति तीनों का सामंजस्य हैं। शरीर को बाहर से जोड़ने के साधन हैं और शरीर के मोह से मुक्ति दिलाने वाले भी हैं। इस प्रकार लोक और शास्त्र का परस्पर विनिमय चलता रहता है।

यह भी कि गवरी देखने में जितनी अनगढ़, अनियमित और अनियोजित लगती है वास्तव में वह ऐसी नहीं है बल्कि उतनी ही सुगढ़, नियंत्रित तथा सुनियोजित है। इसमें दर्शक भी प्रदर्शक होता है। शिव भीलों के जामाता अर्थात् दामाद हैं। मादल महादेव का दल है। थाली पार्वती की रखवाली है। शिव और अशिव का द्वन्द्व गवरी का मूल भाव है। मातृसत्ता की पुन: प्रतिष्ठा ही गवरी का उद्देश्य है। गवरी शैव और वैष्णव की खाई पाटती है। शिव के बीज से अंजनी का गर्भ धारण अधुनातन विज्ञान की ओर संकेत करता है।

कुल मिलाकर कार्यशाला में जो निष्कर्ष हाथ लगे वे इस प्रकार थे-

(1) गवरी की गवेषणा की जाय।

(2) इस विषयक पर्याप्त शोध-सर्वेक्षण-संकलन और पाठालोचन का कार्य अपेक्षित है।

(3) साहित्यिक दृष्टि से गवरी का अध्ययन देश-विदेश के विद्वानों तथा अनुसंधानकर्मियों के लिए जरूरी है।

(4) गवरी में निहित अनुष्ठान, धर्म, दर्शन, अध्यात्म, समाजशास्त्र, खगोलशास्त्र, मानवशात्र का अध्ययन, ज्ञान-विज्ञान के अनेक गवाक्ष खोलने में सक्षम हैं।

(5) गवरी का बार-बार शोधन-परिशोधन किया जाता रहे कारण कि यह पूरी की पूरी एक आदिम जीवन संस्कृति है।

(6) गवरी को भीलों पर थोपना शुभ लक्षण नहीं है। प्रयत्न यही हो कि इसके संरक्षण के लिये वे जिस मनोयोग और भावभूमि लिए हैं, उस मन-भाव को प्रश्रय दिया जाय।

(7) गवरी को प्रदर्शनात्मक कला-विधा के रूप में विकसित किया जाय साथ ही शैक्षणिक एवं रचनात्मक कार्यों में उसके विविध उपयोग किये जांय।

(8) गवरी को समझने तथा संरक्षित करने में जितने भी सरकारी माध्यम हैं उनका उपयोग वांछनीय है।

(9) जनसंचार माध्यमों में गवरी कई दृष्टियों से उपयोगी, मनोरंजक, शिक्षाप्रद एवं संदेश प्रसारण के लिए सशक्त माध्यम सिद्ध हो सकता है।

सरकार राजस्थानी अकादमी को सिरमौर अकादमी घोषित करे : डॉ. देव कोठारी

डॉ. कोठारी के राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी के अध्यक्ष बनने पर उनसे शब्द रंजन कार्यालय में 10 अक्टूबर को हुई डॉ. महेन्द्र भानावत की बातचीत के महत्वपूर्ण अंश

महेन्द्र - राजस्थानी अकादमी के अध्यक्ष बनने पर आपको बहुत-बहुत बधाई। बड़ी लम्बी प्रतीक्षा के बाद सरकार ने यह नियुक्ति दी। देर से ही सही पर आपकी नियुक्ति से सभी खुश हैं।

देव - यह सब साहित्यकार बन्धुओं का मेरे प्रति स्नेह-सौहार्द्र तथा मेरी कार्यक्षमता पर विश्वास का प्रतिफल है। पूर्व में अध्यक्ष पद पर रहते मैंने जो कार्य किया उस पर सबकी सहमति और सद्भाव भी रहा।

महेन्द्र - कहा जा रहा है कि प्रान्त की अन्य अकादमियों में अध्यक्षों की नियुक्ति राजनीति प्रेरक रही। अकादमिक दृष्टिकोण गौण ही रहा। इसे आप किस रूप में लेते हैं?

देव - इसमें कोई संदेह नहीं कि मैं राष्ट्रवादी विचारधारा से जुड़ा हुआ हूं। सक्रिय रूप से तो मेरा पार्टी से कोई जुड़ाव नहीं है और न मैं इसका सदस्य भी हूं।

महेन्द्र - राजस्थानी से आप अपना जुड़ाव किस तरह मानते हैं?

देव - राजस्थानी से शुरू से ही मेरा जुड़ाव रहा। संवत् 1650 से 1750 तक के राजस्थानी साहित्य पर मैंने शोध-प्रबन्ध लिखकर पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। मेरा अधिकांश लेखन भी राजस्थानी का रहा इसीलिए पूर्व में भी मैं इस अकादमी का अध्यक्ष बनाया गया।

महेन्द्र - अध्यक्ष रहते उस काल की आपकी क्या उपलब्धि रही?

देव - सभी ने मुझे सफलतम अध्यक्ष कहकर मेरे कार्यकाल को स्वर्णकाल कहा। मेरे से पूर्व के अध्यक्षों ने जोधुपर-बीकानेर को ही अकादमी से अधिक जोड़े रखा। मैंने पूरे राजस्थान को जोड़ा। पुरस्कारों में भी मैंने कोई पक्षपात नहीं किया। पहलीबार प्रवासी राजस्थानियों को भी अकादमी से जोड़ा।

राजस्थान के अलावा कलकत्ता तथा हैदराबाद में अखिल भारतीय राजस्थानी सम्मेलन प्रारम्भ किया। जयपुर में तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर राजस्थानी सम्मेलन का आयोजन बड़ा अभूतपूर्व रहा। इसमें विदेश में रह रहे 44 राजस्थानी बन्धुओं ने भाग लिया। मुख्यमंत्री वसुन्धरा राजे ने उसका उद्घाटन किया। अन्तर्प्रान्तीय बन्धुत्व आदान-प्रदान योजना के अन्तर्गत गुजरात के राजकोट में भी मैंने राजस्थानी-गुजराती सम्मेलन किया।

यही नहीं, अकादमी की मासिक पत्रिका जागती जोत का नियमित प्रकाशन करते हुए उसका स्तर बढ़ाया। कलेवर तथा साजसज्जा पर विशेष ध्यान दिया। बजट बढ़ाया। एक करोड़ का बजट करने की योजना भेजी। अन्य अकादमियों से भिन्न मात्र यही अकादमी भाषा साहित्य तथा संस्कृति का व्यापकत्व लिये है अत: सरकार इसे प्रदेश की सिरमौर अकादमी घोषित करने का प्रस्ताव भेजा। प्राचीन हस्तलिखित महत्वपूर्ण ग्रंथों के प्रकाशन के साथ-साथ अकादमी के पुस्तकालय को समृद्ध बनाने की योजना प्रस्तुत की। अकादमी के साथ संस्कृति नाम जुड़ा हुआ है पर इस विषयक कोई कार्य नहीं हुआ। एक संग्रहालय खोलने की वृहद योजना भी बनाई।

इसके अलावा सरकार का ध्यान पुरस्कारों की वृद्धि करने की ओर भी आकर्षित किया। लिखा कि आधुनिक साहित्य सृजन तक ही अकादमी के पुरस्कार सीमित हैं जबकि प्राचीन तथा मध्यकालीन और लोकसाहित्य की दृष्टि से भी राजस्थान में बड़ी समृद्ध विरासत मिलती है। राजस्थानी के शब्दकोश को भी विस्तार देने की आवश्यकता बताई। ये सारे कार्य जरूरी थे किंतु मेरा कार्यकाल समाप्त हो गया सो धरे के धरे रह गये।

महेन्द्र - अब आप क्या करना चाहेंगे? प्राथमिकता के तौर पर आप कौनसे कार्य जरूरी समझते हैं?

देव - मेरे लिए अच्छा और सुखद पक्ष यह है कि प्रांत के सभी साहित्यिक बन्धु मुझे असीम स्नेह सहयोग देने हेतु आज भी मेरे पक्षधर हैं। उदयपुर, जोधपुर, पाली तथा अन्य क्षेत्रों से अध्यक्ष पद पर मेरी नियुक्ति के लिए सरकार को लिखा गया।

मैं चाहूंगा कि राजस्थानी भाषा की एकरूपता पर सर्वसम्मति बनाई जाय। संस्कृति पक्ष को लेकर अधिक काम करने की जरूरत है जिस पर कुछ नहीं हुआ। लोकसाहित्य तो कभी सोच में ही नहीं आया जबकि सभी प्रान्तों से यहां का लोक साहित्य अधिक महत्वपूर्ण और गहरी पैठ लिये है। प्राचीन राजस्थानी का जो साहित्य बहियों, शिलालेखों, हस्तलिखित ग्रन्थों तथा ताम्रपत्रों में सुरक्षित है उसे पढ़ने वाले ही इने-गिने हैं। इन क्षेत्रों में काम करने वालों को आगे लाना होगा और उन्हें पुरस्कृत करना होगा।

एक नया शब्दकोश तैयार करना होगा जिसमें मारवाड़ी, मेवाड़ी, वागड़ी, हातौड़ी, मेवाती, शेखावाटी, गौड़वाड़ी आदि के देशज शब्दों को एकत्र किया जाय। इसी तरह एनसाइक्लोपीडिया की तरह राजस्थानी संस्कृति कोश बनाना आवश्यक है। संस्कृति कोश की तरह ही विभिन्न क्षेत्रों में साधनामूलक समर्पण लिए काम करने वालों का व्यक्तित्व कोश बने। ये कार्य किसी अकेले के बूते के नहीं हैं। इसके लिए बजट की व्यवस्था सर्वोपरि है। इन सबके साथ अकादमी उन स्थानों पर सम्मेलन करे जहां के लिए अभी किसी ने सोचा भी नहीं।

महेन्द्र - बहुत-बहुत धन्यवाद। हम सब आपके साथ हैं। 'मन चंगा तो कठोती में गंगा' कहावत चरितार्थ हो। इसी शुभकामना के साथ।

वाचिक परम्परा में संरक्षित महाभारतकालीन प्रसंग

- दिनेश रावत -

लोककाव्य के गुमनाम रचनाकार ऐसी काव्यमयी रचनाएं लोक को समर्पित कर गये, जो कालजयी होकर लोकवासियों की कंठासीन बनी हुई हैं। वे रचनाएं जीवित होकर आज भी उस काल, समय तथा सौरभ लिए प्रत्यक्ष रूप में लोकवासियों के लिए स्वीकार्य एवं हृदयग्राही बनी हुयी हैं।

मध्य हिमालयी क्षेत्र में प्रचलित लोकसाहित्य की इन विधाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं समसामयिक विषयों के साथ-साथ महाभारत एवं रामायणकालीन प्रसंग भी लोकभाषा के विशिष्ट लावण्य से रचे बसे हैं। लोक के अनाम कवियों की ऐसी ही एक रचना में महाभारत के कालक्रम यानी आदि से अंत को समेटने का एक साहसिक प्रयास मिलता है। महाभारतकालीन देशकाल, परिस्थितियों को मध्य में रखकर रची गयी यह रचना न केवल सृष्टि के आदि से अंत तक का बखान करती है, बल्कि महाभारत होने के पीछे के रहस्य को भी उदात्त रूप में उद्घाटित करती है। यथा-

'पैलि उपचि काली बादली /
तब उपचि धरती पिरऽथी/
तब उपचि माता धरती-2 ।/
तबऽ उपचि छामा की डाडि/
तबऽ माता नऽ गौंतऽ सिंचाई/
तबऽ माता नऽ धूपऽ धूपैई/
छामा डाऽडि दोपति होई/
दोपती डाडि चौपति होई।'

अर्थात सृष्टि के उद्भव के समय अखिल ब्राह्मांड में सर्वप्रथम काले बादल उमड़े। गर्जनाएं हुईं और सूर्य से एक तप्त अंश विरल हुआ। मेघों की बूंदाबांदी पाकर पृथ्वी रूपी तप्त अंगरा शीतल होता रचा गया और ममत्व की माया से युक्त होकर धरती माँ के रूप में सामने आया। वसुंधरा के गर्भ से सर्वप्रथम जिस पादप का नवांकुर प्रस्फुटित हो जीवजगत के उद्भव का आधार बना है, लोकवासियों द्वारा उसे आज भी पूजा-अर्चना में शामिल किया जाता है। इसे लोकवासी 'छामरा' के रूप में जानते हैं। विरान पृथ्वी पर ऐसी कौंपलें फूटती देख माता कुंती अत्यधिक प्रसन्न होकर पुत्र प्राप्ति की कामना के साथ नित्य उसका पूजन करती है।

धूप, दीप, गंध, अक्षत, नेवैद्य के अतिरिक्त उसे गौमूत्र व दुग्धा-स्नान करवाकर सींचती है। धरती के गर्भ से फूटा यह नन्हा-सा पौधा माता का वात्सल्य पाकर दिन दुगुनी रात चौगुनी गति से बढ़ता है। इस पर कई कौंपलें एक साथ निकल आती हैं। पूरा पौधा ही लताओं से भरकर हराभरा नहीं होता बल्कि उसके आसपास अन्य पौधे भी उगने लग जाते हैं।

कुंती इसी पौधे की सेवा साधना में लीन होने के साथ-साथ त्याग, तपस्या में केदारभूमि पधारकर पांडु की सहचर ऋषि-मुनियों की सेवा में लीन हो जाती है। इसके फलस्वरूप अंतत: उसे पुत्ररत्न की प्राप्ति होती है। लोकगीत की ये पंक्तियाँ इस रूप में बयां करती हैं-

'करि माता न ऋषि-मुनियों की सेवा/
जर्मी माता कु राजाऽ युधिठिर/
करि माता न बुआडण्डी की सेवा/
जर्मी माता कु गज कू बादुर/
करि माता न इन्द्र की सेवा/
जर्मी माता कु खाति-अर्जुन/
करि माता न पंचदेवों की सेवा/
जर्मी माता कु सहदेव जतंगी/
करि माता न राजा पाण्डू की सेवा/
जर्मी माता कु कांछू नकुल/
कुन्ती माताऽ पंचपुत्रि ह्वेगि-2।

अर्थात कुंती को ऋषि-मुनियों के आशीर्वाद स्वरूप धर्मराज युधिष्ठिर, बुआडंडी की सेवा से बलशाली भीम, देवराज इन्द्र की आराधना से धर्नुधारी अर्जुन, पंचनाम देवताओं के पुण्यफल से महान ज्योतिष सहदेव और पांडु से नकुल के रूप में पाँच पुत्रों की प्राप्ति होती है। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि कुंती ने यद्यपि युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन के रूप में तीन पुत्रों को ही अपने गर्भ से जन्मा। सहदेव व नकुल माद्री के पुत्र हैं फिर भी पारिवारिक एकता के चलते इन्हें इस लोकगीत में एक साथ प्रस्तुत कर दिया गया है। इस प्रकार एक तरफपाँच भाई पांडव तो दूसरी तरफ सौ भाई कौरवों का जन्म हो चुका होता है-

'तबऽ उपचि साठि कौंरऊँ

अर्थात अब कौरवों की भी उत्पत्ति हो गई है।'

कुंती द्वारा पूजा, पाला गया यह नन्हा पौधा अब जंगल में तब्दील होकर विशालकाय भू-खंड को घेर चुका है। इसलिए इस गीत में इन पौधे को ही कौरव तथा पांडवों के बीच उपजे विवाद का कारण बताया गया है-

'कौरऊँ बोल्ऊँ ई डाडि अमारी/
पांडौं बोल्ऊँ ई डाडि अमारी/
कौरों-पण्डौं कु महाभारत होई/
पण्डौं राजों न कौरऊँ हराई।'

अर्थात कौरव कहते हैं कि ये पौधा हमारा और पांडव कहते हैं कि पौधा हमारा है।

इतिहास के पन्नों में दर्ज महाभारत की विभीषिका से सभी परिचित हैं। अन्तत: पांडवों की विजय होती है। युद्ध में भीम के पराक्रम को लोकगीत में इस प्रकार से अभिव्यक्त किया गया है-

'मारि भियाँनऽ गैर-घस्यारऽ/
मारि भियाँनऽ ओख्ल्यार-पन्यार/
मारि भियाँ नऽ बैणि-भाणिज/
मारि भियाँ नऽ धरि-धियाणऽ।'

अर्थात युद्ध के दौरान भीम इतना आक्रोशित था कि उसके सामने जो भी आ रहा था वह एक सीरे से सबका सफाया करता जा रहा था। नाते-रिश्ते, सगे-सम्बंधी यहाँ तक कि वह बहिन व भांजों पर गदा उठाने से भी नहीं चूका। इस पाप से भीम पर कुष्ट पैदा हो गया। गीत साक्षी है-

'तब भियाँली कुष्ट होई पैदा/
लाई भियाँली केदारी मठऽ/
तब भियाँ कु पापऽ मोचन्तऽ होई।'

अर्थात बहिन व भांजों की हत्या करने पर जब भीम पर कुष्ट पैदा हुआ तो अंतत: भीम केदारभूमि जाकर शिव की तपस्या में समाधिस्त हो गया। भीम की ऐसी कठोर तपस्या देख शिव द्रवित हो जाते हैं और भीम को पाप से मुक्ति प्रदान करते हैं।

खोज-खबर

थेवा कला के थापण में शंकरजी का सोनी परिवार

राजस्थानी शिल्पकलाओं के अजूबे और अनूठेपन ने पूरे विश्व को चकित-थकित किया है। ऐसी कलाओं में कांच पर सुनहरी जड़ाई की कलमकारी के अद्‌भुत कमाल

के लिए प्रतापगढ़ का सोनी परिवार पिछले चार-साढ़ा चार सौ वर्षों से अपनी जड़ों की जमीनी ऊर्जा को ओजस्वी बनाये हुए है। यह कला थेवा कला के नाम से जानी जाती है। यहां का सोनी परिवार राजकीय संरक्षण पाता हुआ आज भी राष्ट्र सम्मान पाने में बेजोड़ बना हुआ है।

कला का कोई भी स्वरूप हो, उसका प्रारम्भ एक व्यक्ति विशेष की प्रतिभा से अधिक फलित होता है किन्तु बाद में अनेक व्यक्ति एवं परिवार उससे जुड़ जाते हैं और वह कला विविध रूपों में प्रयोगधर्मी बनती रहती है। थेवा कला की ही यह विशेषता है कि यह कला एक ही परिवार तक गुप्त रही और मात्र पुरुष पक्ष ही इसका पोषणहार रहा। घर की महिला-शक्ति चाहे वह बहिन-बेटी हो या बाहर से लाई बहू हो, उससे नितांत गोपनीयता रखी गई।

यह गोपनीयता तो मैंने यहां तक देखी जब मैं प्रतापगढ़ गया और शंकरलालजी सोनी से भेंट की। वे अपने छोटे से कला-कक्ष में थेवा कला की कारीगरी में डूबे हुए थे। वे सहम गये जब मैने उनको अपना परिचय दिया और उनके पास सुरक्षित एवं सुनियोजित ढंग से संरक्षित इस कला में नामवरी के लिये राजस्थान को गौरवान्वित करने पर उन्हें बधाई दी। यह समय 15 अक्टूबर 1968 के दिन प्रात: कोई दस-ग्यारह बजे का रहा होगा। बहुत सारी बातों की लापालोर में शंकरजी को तसल्ली हो गई कि मैं उनके लिए अब अपरिचित नहीं रहा हूं।

उन्होंने अपने चेहरे पर गर्वित होते बताया कि देवगढ़ ठिकाने के शासक सामंतसिंह को एकबार उनके पूर्व-पुरुष नाथूजी ने अपने द्वारा निर्मित थेवा कला की पान रखने की डिबिया नजर की। वह डिबिया नीले रंग के कांच की थी जिस पर सोने के महीन तारों का जड़ाव देते बेल-बूंटों तथा फूल-पत्तियों का उभारण दिया हुआ था। महाराज सामंतसिंहजी ने वह डिबिया देख बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की। नाथूजी से इस कला की जानकारी प्राप्त कर महाराजश्री ने उनका बड़ा मान किया और 'राज-सोनी' की उपाधि के साथ बसाड़ तथा बीर्दिया गांव की जागीरी बख्शी। तब से यह परिवार राजसोनी के रूप में अपनी ऊंची पहचान बनाये हुए है।

नाथूजी से चलकर यह वंश फतेचंदजी से होता मथुरालालजी तक अपनी पैठ बनाये रहा। उसके बाद तीन शाखाएं फटीं। इनमें पहले स्वयं शंकरलालजी, दूसरे बेनीरामजी तथा तीसरे रामविलासजी हुए। तीनों ने समान रूप से इस कला में दक्षता प्राप्त की। इन्होंने जो कुछ सीखा, उसमें बड़े उम्दे प्रयोग कर वाहवाही ली। मैंने शंकरलालजी को कहा कि उनका वंशरक्षक बड़वाजी अथवा भाटजी का पता कर नाथूजी से या उनसे भी पहले हुए पूर्व पुरुष का और उसके बाद का क्रमवार

इतिहास अवश्य प्राप्त करें ताकि सिलसिलेवार जानकारी हाथ लग सके। यह भी जानना चाहा कि तीनों शाखा-प्रमुखों की थेवा कलागत क्या विशेषताएं रहीं।

शंकरलालजी और मेरे बीच प्रारम्भ में जो दगदगा बना हुआ था, अब वह मुझे उन्मुक्त मैत्रीभाव में खुला खिलखिलाता लगा। उन्होंने तीनों की कलात्मक पहचान के लिए बताया कि प्रारम्भ में केवल नीला कांच लिया जाता था। इन्होंने उसके साथ लाल तथा हरा कांच जोड़कर थेवा कोरना प्रारम्भ किया। इस प्रयोग द्वारा उन्होंने प्लेटें, फूलदान, पानदान, सिगरेट दान तथा मनमोहक बॉक्स बनाये जो बड़े सराहे गये। बेनीराम ने उस कला में आधुनिक मांग के अनुसार मॉडल बनाने की कला विकसित की। इसी

तरह रामविलास ने रंग और रेखाओं के माध्यम से चित्रकला को और अधिक कलात्मक रूप दिया। इससे राज परिवार में भी उन्हें विशेष सराहना मिली।

थेवा कला विभिन्न रंगों के कांचों को जिन्हें शीशे भी कहा जाता है, चांदी के महीन तारों से बनी फ्रेम में डाल, उस पर सोने की बारीक कला कृति उकेरने की कला है। छोटे-छोटे औजारों की सहायता से इसका उकेरन कोई दक्ष और हुसियार कलाकार ही कर सकता है। प्रथम चरण में कांच पर सोने की शीट लगाकर बारीक जारी बनाई जाती है। इसे थारणा अथवा थेवा देना कहते हैं। द्वितीय चरण में कांच को कसावट देने के लिए चांदी के बारीक तार से फ्रेम तैयार की जाती है। यह वाडा नाम से जानी जाती है। इसके बाद तेज आंच में उसे तपन दी जाती है। इससे शीशे पर सोने की कलाकृति उभर आती है। यही कला थेवा कला के नाम से जानी जाती है।

कांच से पूर्व यह कला लाल, नीले, हरे, पीले रंगी पत्थरों तथा हीरे पन्ने पर उकेरी जाती थी। इसके लिए कलाकार को चित्रकला की अच्छी जानकारी होनी जरूरी है। यह वर्षों तक सीखते रहने के अभ्यास से निखरती है। यही कारण है कि आठ-दस वर्षों की कच्ची उम्र से ही बच्चों को इस कला से परिचित करा दिया जाता है। उन्हें प्रारम्भ में पशु-पक्षी, वनस्पति तथा मानव से जुड़ी विभिन्न आकृतियों का अभ्यास कराया जाता है तदनन्तर कांच तथा रूपहले-सुनहरे तारों की कला का अभिज्ञान दिया जाता है। अठारह-बीस वर्ष का होता युवक धीरे-धीरे अनुभव अर्जित करता इस कला में पारंगत हो जाता है।

अपनी कलात्मक पहुंच के कारण शंकरलालजी 1970 में राष्ट्रपति वी. वी. गिरि से सम्मानित

हुए और तीन वर्ष बाद प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने भी उन्हें सम्मानित किया। उनके पुत्र रामनिवास को 1982 में नीलम संजीव रेड्‌डी ने सम्मानित किया।

ऐसे ही बाद में जगदीशलाल, रतनलाल, मोहनलाल, मानेकलाल, बसंतलाल आदि सभी कभी राज्य स्तरीय, कभी राष्ट्र स्तरीय तो कभी अखिल भारतीय हस्तशिल्प मंडल से सम्मानित होते रहे। राजसोनी परिवार में संलग्न कोई भी कलाकार ऐसा नहीं मिलेगा जो थेवा कला में दक्ष न हो और किसी भी सम्मान-पुरस्कार से वंचित हो।

पंडवानी की पर्याय तीजनबाई

पंडवानी गाने में तीजनबाई ने न केवल छत्तीसगढ़ अंचल को ख्यात किया अपितु पूरे विश्व में उसे सुचर्चित कर अपना नाम रोशन किया। दरअसल पंडवानी एक गायन शैली है जिसका सम्बन्ध पांडव कथा से है। इसमें सम्पूर्ण महाभारत की कथा वर्णित रहती है। पंडवानी को कुछ गायक गद्य को पद्य की लहर देते प्रस्तुत करते हैं तो कुछ गद्य तथा पद्य का मिश्रित रूप लिये श्रोताओं को रस विभोर करते हैं।

इन गायक-गायिकाओं में अधिकांश सतनामी या आदिवासी समूह के हैं। इनकी खासियत यह है कि सम्पूर्ण कथा को सिलसिलेवार कंठस्थ किये हैं और बड़ी तन्मयता के साथ सुनाते हैं। तीजनबाई आदिवासी बहलिया जाति की है। पिता छुनुकराम बांस बजाते जबकि माता सुखवती उनके साथ बांस के गीत गाती थी। उनके साथ उठते-बैठते बचपन में ही तीजनबाई को गाने-नाचने का शौक लग गया।

तीजनबाई का स्वर बड़ा मधुर तथा ऊंचा था। खेतों में काम करते वक्त टोली बना ठेठ ऊपर राग

चढ़ाकर गाने से अन्य लोग आकर्षित होते। प्रशंसा करते। ददरिया और करमा गीत गाते और भी सीखते। ऐसे गाते-गाते हिरदा पक्का हो गया। संकोच जाता रहा।

तीजनबाई की यह विशेषता है कि पंडवानी में जो कथा-कथानक है उसे हू-ब-हू अपने स्वरों के उदात्त गांभीर्य, अभिनय की असीम क्षमता तथा तन्दूरे की हलन-चलन से उस कथा विशेष तथा उससे जुड़े पात्र के चरित्र को साक्षात् कर देती है। उसमें प्रसंगानुसार रसवृष्टि का जो कला-कौशल है वह अतुलनीय है। दर्शकों को भी उसी भावभूमि में पहुंचाने का जबर्दस्त हौंसला है। वह स्वयं ही नहीं, दर्शकगण भी यह भूल जाते हैं कि जो प्रस्तुति वह दे रही है वह महिला है, तीजनबाई है।

साक्षात् महाभारतकाल को जीवन्त करने की ऐसी कला अन्यों में नहीं देखी जाती इसीलिए तीजनबाई पंडवानी की पर्याय बनी हुई है। पात्र चाहे दुर्योधन हो, कर्ण हो, भीम हो, कीचक हो, द्रोणाचार्य हो, दुशासन हो, कुन्ती हो, सुभद्रा हो या द्रोपदी हो ; हर पात्र को उसने अंगीरस में इस करीने से बिठा रखा है कि मंच पर उसी का सबरस साक्षात् संश्लिष्ट हुआ परिलक्षित होता है।

अपने सांवलेपन में छरहरी लम्बी देहयष्टि, चमकदार नेत्र, माथे की मांग में मोटी गहराती सिन्दूरी रेखा, चांदी का भारी भराव वाला कमर में कंदोरा, हाथों में कांच की खनखन चूड़ियां ; एक साधारण सी आत्मीय घरेलू मन लिये तीजनबाई का स्वरूप एक मामूली महिला का ही एहसास कराता है पर वही रूप लिये जब मंच पर महाभारत कथा करने तीजनबाई आती है तो अपने तन्दूरे में भी एक प्रवीण कलाकर्म का असर नहीं दिखाती, वह स्वयं भी उन्हीं भावों में कभी किसी को पछाड़ती, गुस्सा करती, किलकारी भरती, तमतमाती, आंखें निकालती तो कभी दुश्मन को ललकारती, उसका सर कलम करती, मूंछों पर ताव देती, जंघा फरकारती और कभी चीखती, चीर-चीर होती खो जाती है। तबला, हारमोनियम, ढोलक की संगत अभिनय की रंगत में चार चांद लगाते लगझग हुए लगते हैं।

शिल्पग्राम में जब मेरी तीजनबाई से भेंट हुई तो मुझे यह भी लगा कि उनका पूर्व का गृहस्थ जीवन 'आंगन में है पूत किन्तु आंखों में पानी' ही अधिक रहा। एक महिला कलाकार होते हुए भी तीजनबाई ने पंडवानी को जो पौरूष-रूप दिया वह सर्वथा अकल्पनीय, अजोड़ तथा अन्य अनन्य है।

- म. भा.

शब्द रंजन

उदयपुर, सोमवार 15 अक्टूबर 2018

सम्पादकीय

तेरह वर्ष बाद गवरी

अमूमन प्रति तीसरे वर्ष ली जाने वाली गवरी इस बार तेरह वर्ष बाद ली गई। घटना आदिवासी क्षेत्र गोगुन्दा से 15 किलोमीटर दूर के गांव ओड़ों का गुड़ा की है। इस क्षेत्र में कार्य कर रहे अलर्ट संस्थान के अध्यक्ष जितेन्द्र मेहता ने बताया कि उनसे जुड़े मगनाराम ओड़ों का गुड़ा के ही निवासी हैं।

हर बार इस गांव में गमेती परिवारों ने देवी गौरज्या से गवरी लेने की अरदास की परन्तु फूल नहीं दिया गया सो गांव वाले थोड़े निराश तो होते रहे पर उनके मन में यह धारणा प्रबल थी कि देवी की दृष्टि में ऐसी कोई बात रही होगी जिसके कारण गवरी लेने की पाती अब मिली।

इस गवरी में सौ के करीब खेल्ये जुड़े। पूरे चालीस दिन घर की सुध नहीं ली। विवाहितों ने अपनी घरवालियों की शक्ल तक नहीं देखी। पीछे की घर-गिरस्थी सब देवी के भरोसे छोड़ दी। खेती-बाड़ी की सार-संभाल घरवाली अपनी क्षमता के अनुसार करती रही। गवरी वालों ने पूरे समय ब्रह्मचर्य व्रत की पालना की। हरी सब्जी का स्वाद नहीं लिया। एक समै भोजन लिया। पांवों में जूते नहीं पहने। स्नान नहीं किया। खुले आंगन में सोये।

जो पोशाक प्रदर्शन की पहनी, वही पहनी रही। पांवों में घुघरे बन्धे रहे। मुख्य अभिनेता यानी गवरी नायक-नायिका, भोपा, वादक, कुटकड़िया सब अपने-अपने जिम्मे का कर्त्तव्य पालन करते रहे। छोटे-छोटे बच्चों ने भी पहलीबार अपना घर छोड़ा और गवरी ली। यह उनके लिए संस्कार प्राप्त करने का प्रशिक्षण काल है साथ ही घर से दूर रहकर जानने का तजुर्बा भी है।

समय का परिवर्तन आया तो कुछ फर्क पड़ा ही। जो लोग नौकरी-पेशा हैं उन्हें अवकाश नहीं मिलता। ऐसी स्थिति में वे अपनी जगह अन्य गमेती भाई को अपना दायित्व संभला देते हैं पर देवी के दरबार में अपनी उपस्थिति का आंक खाली नहीं जाने देते।

गवरी में देवी के प्रति पूर्ण निष्ठा, आस्था तथा सर्वस्व समर्पण का अडिग विश्वास तो रहता ही है, अन्दर पेटे एक आशंका और डगपच भी रहती है कि यदि जरा सी कमी, गलती या मन की आगापाछी रही तो अनिष्ट और अमंगल का सामना करना पड़ेगा। देवी का कोप कोई नहीं चाहता। इसलिए बार-बार पंचों, मोतबीरों का फरमान निकलने पर भी गवरी बन्द नहीं हो पाई। काश! ऐसी आस्था हर मानुस में हो।

नारायण सेवा पर डाक टिकट जारी

उदयपुर। भारतीय डाक विभाग ने नारायण सेवा संस्थान पर डाक टिकट जारी किया। संस्थान के बड़ी परिसर में आयोजित समारोह में अजमेर मंडल के पोस्ट मास्टर जनरल रामभरोसा, उदयपुर डाकघर मंडल के प्रवर अधीक्षक जी एस

गुर्जर और संस्थापक कैलाश अग्रवाल की उपस्थिति में टिकट का अनावरण किया गया। पांच रुपए के इस डाक टिकट में उज्वल रंगों में नारायण सेवा संस्थान का आधिकारिक लोगो शामिल है। साथ ही इसमें उदयपुर स्थित पोलियो अस्पताल की तस्वीर को भी स्थान दिया है। कैलाश अग्रवाल ने कहा कि संस्थान के लिए यह गर्व का पल है, जब भारतीय डाक विभाग ने संस्थान पर डाक टिकट जारी करते हुए हमें सम्मानित किया है। निश्चित तौर पर यह संस्थान के लिए लाइफटाइम अचीवमेंट के समान है।

पत्र-पिटारी

शब्द रंजन के अंक 18 में डॉ. महेन्द्र भानावत लिखित 'निर्भय मीरां' पुस्तक के लोकार्पण का विवरण पढ़ा। वस्तुत: वह समारोह बड़ा गरिमापूर्ण और अविस्मरणीय ही बना हुआ है। उस समारोह में मैं भी उपस्थित था। उस समय का मेरे पास एक चित्र सुरक्षित है जिसमें ओंकारलाल बोहरा, नंद चतुर्वेदी, डॉ. भानावत, डॉ. प्रभा वाजपेयी, राजेन्द्र सक्सेना तथा श्रीकृष्ण जुगनू दिखाई दे रहे हैं।

- डॉ. सतीश मेहता, सुजानगढ़

शब्द रंजन के अंक 18 में स्मृतियों के शिखर में मुझे सम्मिलित कर जो विवरण डॉ. भानावतजी ने दिया उसे पढ़कर मैं धन्य निहाल हो गई। उस काल की अनेक स्मृतियां मुझे याद हो आईं। कलागुरु देवीलाल सामरजी के साथ हम सारे कलाकारों ने उनके सान्निध्य में रहकर जो कुछ सीखा, समझा सचमुच में उन्होंने हमारा जीवन ही बदल कर सम्मानजनक बना दिया।

खोज विभाग में भानावतजी से हमारा अधिक मिलना-बैठना नहीं था। केवल प्रात:कालीन प्रार्थना या अन्य समारोहिक प्रसंगों में ही हम सब मिलते थे किन्तु उनके द्वारा किये जा रहे कार्य आज भी भारतीय लोककला मण्डल की ख्याति में चार चांद लगा रहे हैं। सामर साहब के निधन के बाद स्थितियां बड़ी तेजी से गड़बड़ाईं। मैंने तो इसीलिए समय पूर्व ही सेवानिवृत्ति लेकर शाकुन्तलम की स्थापना की और जो कुछ सीखा उसका सदुपयोग छात्र-छात्राओं को नृत्यों का प्रशिक्षण देते अब तक कर रही हूं।

- शकुन्तला पंवार, उदयपुर

शब्द रंजन के अंक 17 में डॉ. महेन्द्र भानावत ने अपने सुचर्चित स्तंभ स्मृतियों के शिखर में मेरे पर जो स्मृति-लेख लिखा उसके लिए मेरे पास धन्यवाद हेतु कोई शब्द नहीं है। इस स्तंभ में वे जिन व्यक्तियों को स्थान दे रहे हैं वह अभूतपूर्व है। अब साहित्य, संस्कृति, कला आदि सभी क्षेत्रों में वह सौहार्द्र और स्नेहिल भाईचारा नहीं रहा। ईर्ष्या, द्वेष तथा टांग अड़ाई जैसी घटनाएं अधिक सुनने को मिल रही हैं और हर व्यक्ति किसी न किसी सांचे में आबद्ध हुआ लग रहा है। ऐसे में कोई बड़ा दिल रखकर हमारे जैसे व्यक्ति पर जरा भी कुछ लिखता है तो हमारी प्रसन्नता बांसों उछालें मारती हैं। मुझे याद पड़ रहा है कि मैंने पेट्रोल नामक हिन्दी फिल्म की विडियो सीडी का 4 दिसम्बर 2007 को डॉ. भानावतजी से लोकार्पण कराया था। इस फिल्म के सात गीत मेरे लिखे हुए हैं। लोकार्पण पर मुख्य अतिथि गीतकार किशन दाधीच थे। **-इकबाल सक्का, उदयपुर**

आपका यह शब्द रंजन पाक्षिक समाचारपत्र मुझे पहली बार मिला। पूरा पढ़ा क्योंकि मेरे मित्र डा. महेंद्र भानावत का नाम इससे जुड़ा है। इसे पढ़कर आश्चर्य हुआ। इसके सभी लेख पठनीय हैं और डा. महेंद्र भानावत का लेख तो कई नयी जानकारी देता है। डा. नगेंद्र मेरे गुरु थे। उनके बारे में नयी जानकारी मिली। विकल्प मेहता का फ्रांस पर संस्मरण रोचक और ज्ञानवर्धक है। मैं एक सप्ताह पेरिस में रहा था। मेरे अनुभव भी वैसे ही हैं। आप सच में साहित्यिक पाक्षिक पत्र निकाल रहे हैं और इसके लिए आप तथा रंजना भानावत बधाई के पात्र हैं। आपने मेरा पता गलत लिखा है पर मेरा डाकिया इस बार मुझे दे गया। उसका धन्यवाद। **- डॉ. कमलकिशोर गोयनका, दिल्ली**

(जबसे शब्द रंजन प्रकाशित किया जा रहा है तब से डॉ. गोयनकाजी को भेजा जा रहा है। यह खेद ही रहा कि न उन्हें कोई अंक मिला न लौटकर ही हमारे पास आया- संपादक)

डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम' पर केंद्रित ग्रंथ 'कुसुमार्चन' पर परिसंवाद

शब्द संसार और डॉ. राधाकृष्ण राज्य पुस्तकालय के तत्वावधान में हाल ही में मूर्धन्य साहित्यकार डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम' पर केन्द्रित ग्रंथ 'कुसुमार्चन' पर परिसंवाद का

आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि न्यायमूर्ति विनोदशंकर दवे ने कहा कि संसार में उत्कृष्ट साहित्य सदैव कालजयी रहता है। चाहे वह किसी भी देश या भाषा में रचा गया हो। हमें ऐसे साहित्य को अनुवाद के जरिये भी पढ़ना चाहिये। डॉ. शर्मा ने साहित्य की लगभग हर विधा में सृजन कर समाज को बहुत समृद्ध किया है।

समारोह की अध्यक्षता करते देवर्षि कलानाथ शास्त्री ने कहा कि डॉ. कुसुम किसी खेमे से नहीं बंधे। वे अजातशत्रु साहित्यकार हैं। उन्होंने तीन भाषाओं में समान रूप से सृजन और समीक्षात्मक लेखन किया। संयोजक श्रीकृष्ण शर्मा ने कहा कि आज हमारा युवा स्वयं को दिग्भ्रमित महसूस कर रहा है। उसे सही नेतृत्व की तलाश है। अच्छा साहित्य ही उसका मार्गदर्शक हो सकता है। 'कुसुमार्चन' में 70 विद्वानों के विचार समाहित किये गए हैं।

डॉ. अमला बत्रा ने कहा कि कलम का काम सिर्फ शब्द उकेरना ही नहीं होता बल्कि शब्द-शक्ति की पहचान और उसकी अनुभूति करना भी है। डॉ. जयश्री शर्मा ने कहा कि डॉ. नरेन्द्र शर्मा ने संस्कारशील साहित्यिक पत्रकारिता के माध्यम से समाज में संस्कारों का निरूपण किया है। लोकेशकुमारसिंह साहिल ने कहा कि साहित्य में रचना को वक्त की छलनी अपनी तरह से छानती है। आज हम मूर्ति भंजक दौर में जी रहे हैं। डॉ. कुसुम के साहित्यिक अवदान की कई छवियां हैं। वे छन्द-गीत के आदमी हैं। मथुरेश नन्दन कुलश्रेष्ठ ने कहा कि डॉ. शर्मा एक हृदयावर्धक कवि हैं। उनका सस्वर काव्य-पाठ आनन्द की अनुभूति करता है। कुसुमार्चन की सम्पादिका डॉ. कृष्णा रावत ने कहा कि कुसुमार्चन सुदीर्घजीवी साहित्य साधना का विश्लेषणपरक आकलन है। परिचर्चा के अन्तिम चरण में डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम' ने कहा कि यह उनका सम्मान नहीं, अपितु उनके जीवन के उद्दात्त मूल्यों एवं साहित्य सृजन की श्रेष्ठता का सम्मान है। अंत में किशन मित्तल ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

इस अवसर पर पंचशील जैन, डॉ. सुषमा शर्मा, बाबूलाल खांडा, फारूक अफरीदी, अरूणकुमार ओझा, हर्ष, वीना चौहान, रेणु शर्मा 'मुखर', करूणा श्रीवास्तव, वीरबाला भावसार, नवल पाण्डेय, सत्यनारायण व्यास, कृष्णवीर द्रोण, महेन्द्र जैन, अशोक राही, माधुरी शास्त्री, आर. के. शर्मा, रामलक्ष्मण गुप्त, नीलिमा टिक्कू, डॉ. जनार्दन शर्मा आदि साहित्यकार, रंगकर्मी व संस्कृतिकर्मी उपस्थित थे।

- प्रस्तुति : श्रीकृष्ण शर्मा

स्मृतियों के शिखर (61) : डॉ. महेन्द्र भानावत

सूली पर सेज डाले राजनट गोरधन

राजनट गोरधन उदयपुर के पास सवीनाखेड़ा गांव में अपने डेरे सहित रहता। पहली बार मैंने सवीना में ही विदेशियों के बीच 16 नवंबर 1984 को उनका खेल देखा फिर भारतीय लोककला मण्डल में आयोजित लोकानुरंजन मेलों में दो-दो दिन तक उनके सारे करतब देखे जो वे दिखा

सकते थे। हमारे लिये ही नहीं, बाहर से आने वाले कलाकारों तथा विद्वानों तक के लिए उनका खेल अकल्पनीय, अचरज भरा था। ऐसे कठिन कौतुक अब तो नटों से भी संभव नहीं लगते।

गोरधन की उम्र का अनुमान लगाना मुश्किल था। साथ वाले कहते हैं- 'बाबूजी, सात पीढ़ी उम्र होगी।' मैं यह सुन अंदाजा नहीं लगा पा रहा था। कौन याद रखता है इनकी उम्र को! कलाकार जो भी मिलता है, अपनी उम्र की ऐसी ही पहेली देता है। कोई कहता है, चार-चार महाराणाओं को देखा। कोई कहता है, छपन्या के अकाल में इतने-उतने बरस का था। कोई कहता है, मेरे वालिद उन महाराणों के समय थे। उन्होंने वन की उम्र पार की (पचास से साठ के बीच की उम्र)। यह सब तो मैंने सुना पर पीढ़ियों से उम्र का अंदाजा मैंने पहली बार सुना। इसीलिए पूछ बैठा- 'एक पीढ़ी कितनी उम्र की गिनते हो?' साथ वालों ने कहा - 'दस बरस की।' मैंने गोरधन की उम्र सात पीढ़ी यानी सत्तर बरस निकाली पर विश्वास नहीं हुआ।

पूछने पर गोरधन ने बताया -'उम्र को क्या पूछो बाबूजी, हमारी उम्र तो अपनी ताकत की उम्र है। शरीर का कोई अंग ऐसा नहीं जो सुस्ता जाए। हर समय तने के तने रहना पड़ता है। खेल नहीं करें तो शरीर ठंडा पड़ जाए। फिर तो गए काम से।'

'आप लोगों की कला में बड़ा जादू है।' मैंने कहा तो गोरधन अपनी बैठक छोड़ उठ बैठे और बोले, 'बाबूजी हम जादूगर नहीं हैं मगर जादू वाले भी पानी भरते नजर आते हैं। बड़े-बड़े जादूगरों ने भी हमारा खेल देखा है। हमने भी उनका खेल देखा है। हमारा खेल खरा है। कोई जादू-वादू, तंतर-मंतर नहीं है।'

'कौन-कौन से ऐसे खेल करते हो जो जादू जैसे असर करते हैं?' गोरधन ने बताना शुरू किया- 'क्या बताएं बाबूजी, हमारी सेज तो सूली ऊपर है। न धरती हमें आसरा देती है और न आकाश हमें गोदी देता है। सूली की अणि को नाभि में रख चकरी लेते हैं। कच्चा पोचा हो तो सूली छेद कर उसके आरपार निकल जाए। जीभ पर कपड़े की गोटी रख कर छह-छह तलवारों का बैलेंस बनाते हैं। तीन तलवारें तो जीभड़ी के टोये पर रख कर चलते हैं। मजाल है जो तलवारें गिर जाएं। जीभ पर ही लोहे की ताणी रख कर बिना उसे छुए मोती पिरोते रहते हैं। एक बांस पर तो कभी दो बांसों पर लंबे-लंबे पांवड़े भरते हैं। हाथ-मुंह और कमर में तलवारें टिका कर उन्हें तेजी से घुमाते हैं। दांतों के सहारे तीन-तीन मन वजन के लक्कड़ को रस्से से बांध उठा लेते हैं। गोली को मुंह में लेकर तेल की कढ़ाई में डाल ज्वाला पैदा करते हैं। छाती पर तलवार बांध तेजी से घुमाते हैं। ऐसे एक नहीं पचासों तरह के करतब दिखाते हैं।'

'तब डर नहीं लगता? मौत का भय नहीं सताता?' पूछने पर गोरधन बोला- 'जान सबको प्यारी होती है पर मन में यह भय नहीं रखते हैं। हमारा खेल ही ऐसा है कि जरा सा चूके कि मौत ले गई। मौत तो छाया की तरह हमारे साथ-साथ रहती है। हम जीवन को भी जीते हैं और मौत को भी जीते हैं।'

'बिना किसी शक्ति के इतने कठिन काम नहीं हो सकते। किसी न किसी पर तो विश्वास करते ही होंगे? कौन इष्टदेव है?' गोरधन बोले- 'उसके बिना तो पत्ता भी नहीं हिलता। हम जैसा खेल करते हैं वह सब ताकत का खेल है। ऐसी ताकत तो बाबूजी बजरंगबली में ही थी। वही हमारी रक्षा करते हैं। देवी भवानी तो हमारे शरीर में बनी ही रहती है। यदि वह नहीं हो तो हम आग के गोले मुंह से कैसे निकाल लें। चलते हुए ऊंट और हाथी को हम छलांग लगा लेते हैं। लोग बंदूक चलाएं और गोली हमारी छाती से चिपक जाय फिर भी हमारा कुछ ना बिगड़े। लम्बे-लम्बे बांसों पर खड़े-खड़े घोड़ी चलते हैं। कोई गधी चल कर बताए! खेल के दिन हम भूखे रहते हैं। देवी हमारी हर समय रक्षा करती है। यदि ऐसा न हो तो कितने ही नट यमराज की शरण पहुंचे होते।'

'लाव यानी रस्से पर कलाबाजी करना तो नटों की खास पहचान रही है।' सुनते ही गोरधन बोल उठे- 'यह काम तो हमारे लिये मामूली है। रस्से पर चकरी घुमाना, चकरी पर बैठकर चक्कर लगाना, छतरी लेकर चलना। सर्कस में आपने मेमों को रस्सी पर काम करते देखा होगा, हमारी ही तो नकल है वह। हम तो गधे की गांठ बांध कर पीठ पर लादे रस्सी पर ऐसे चलते हैं जैसे सड़क पर चल रहे हों। आए कोई सर्कस वाला और करे यह काम!'

'सुना है नट भी तरह-तरह के होते हैं, क्या यह सही है?' गोरधन ने गर्दन ऊंची कर कहा-'हां बाबूजी, ठीक सुना है आपने। राजनट तो होते ही हैं जैसे हम हैं जो राजा-महाराजा और बड़े-बड़े ठिकानों में जागीरदारों को अपना खेल दिखाते रहते हैं और वाहवाही पाते रहते हैं। खूब इनाम-बख्शीश भी मिला। जागीरें तक मिलीं।

दो तरह के नट और होते हैं। एक कबूतरिया और दूसरे डोगला। कबूतरिया में तो औरतें भी सूली पर घूमती हैं। लाव पर चलती हैं मगर हमारे राजनटों में तो औरतों का कोई काम नहीं। वे तो हमारा खेल तक नहीं देखतीं।'

'देख लें तो क्या होता है?' यह सुन तपाक से उसके बोल निकले- 'देख लें तो खतरे की घंटी लगती है। चोट लगती है और यह कथनी सुनाई-

'सगली बगली कंजरी धोबण नायण जात /

नारी का कमाया नर खावे जीकां एल जमारा जाय।'

'बाबूजी कंजर, धोबी और नाई जात में औरतें भी कमाती हैं मगर हमारी जात में ऐसा माना जाता है कि यदि कोई आदमी औरत की कमाई पर पलता है तो उसका जीवन ही व्यर्थ है।'

नट लोग बड़े स्वाभिमानी, हाजिर जवाबी और आशु कवि होते हैं। बदली हुई परिस्थिति और समय की धार को ये खूब पहचानते हैं। समसामयिक घटना-परिवेश की इनमें जबर्दस्त पकड़ होती है। व्यवस्था के प्रति बड़ी पैनी मार और तीखी धार इनकी रचना प्रक्रिया में देखने को मिलती है। प्रत्येक खेल के साथ

ढोलक की गूंज और छंद-बोल इनके खेल को अर्थ देते हैं और उसकी पृष्ठभूमि को खोलते चलते हैं।

उदयपुर की पीछोला झील में बने नटनी के चबूतरे की याद दिलाते हुए जब मैंने गोरधन से उसकी जानकारी चाही तो उसका हिया भर आया और सुनाना शुरू कर दिया- 'उस नटनी का नाम सुंदर था और नट था जलालिया। जलालिया महलों में, त्रिपोलिया में हाथी कूद गया। हाथी का नाम था चंचलगर। पीछोला में सूरज गोखड़े से जगमंदरां तक नाड़ी लगाई। उस पर पाछपगां जलालिया चला। दरबार के लोगों को जलन हुई कि इसे आधा राज मिल जायेगा तो नाड़ी (लाव, रस्सा) काट दी। जलालिया पीछोला में जा गिरा और मर गया। उसके मरने पर सुंदर सती हुई।

मरते-मरते उस सती ने श्राप दिया कि कोई नट आगे यहां खेल नहीं दिखायेगा। जलालिया माना हुआ नट था। महाराणा ने उसकी कलाबाजी पर बंबोरा के पास का चांवड्या गांव तथा बारह बीघा जमीन दी और बारह ढोलकी मोहरों से भर दी। उसे जनाना-मरदाना दुपट्टा और सरपाव दिया। सोने के कंठी-कड़े दिये। छोगा पछेवड़ी, चंपा घोड़ा और सुंदर नाम का हाथी दिया। यह जलालिया भी सवीनाखेड़ा का ही था।'

मैंने पूछा- 'पीछोला की घटना गलकी के नाम से जुड़ी हुई है। पहली बार ही मैं उसकी जगह सुन्दर का नाम सुन रहा हूँ।' इस पर गोरधन बोले -'आप भी सही हैं। गलकी नाम उसकी नानी का दिया हुआ पीहरपक्षीय नाम था। यही नाम अधिक चला। सुन्दर नाम चल नहीं पाया। जो चल निकले वही कुछ लेकर निकलता है। इसीलिए फले उसकी खेती कही जाती है। सुन्दर अपने नाम-रूप की तरह बड़ी रूफाली नाक-नक्श की थी।'

रस्सी अर्थात् लाव तानकर जो खेल किये जाते हैं, वे भी चकित कर देने वाले हैं। जितने करतब ये करते हैं उनका यदि प्रशिक्षण दिया जाय तो वर्षों लगने के बाद भी इस कला में कोई निष्णात बन जाय, सम्भव नहीं लगता। गोरधन ने कहा भी -'बच्चा हो या बच्ची अपनेआप सीखती है। हम इधर कलाबाजी करते हैं, छोरे-छोरी हमें देख अपनेआप ही वह कला करने लग जाते हैं। सिखाने के नाम पर मां के पेट में ही यह शिक्षा मिल जाती है।'

ऐसा भी होता है जब रस्सी ऊपर तनी हुई है, हम खेल कर रहे हैं और हमारा छोकरा ठीक हमारे नीचे वही कला अपने अंग में निकाल रहा होता है तब देखने वाले उसे देखने लग जाते हैं और हमसे भी उसे ज्यादा इनाम मिलता है। इससे उसका हौंसला बढ़ता है तब वह सोते-जागते कुछ न कुछ कुचमादी करता हुआ कम उम्र में ही होशियारी पकड़ लेता है।

जो काम हम रस्सी पर करते हैं वही काम हमारा छोकरा जमीन पर करता है और पकड़ बना लेता है। रस्सी पर करतब पूछने पर गोरधन ने लपाक-तपाक गिनाना शुरू किया-

(1) रस्सी पर चकरी लेना (2) झूला झूलना (3) हवा खोरी करना (4) हाथों में थाली घुमाना (5) थाली अधर से झेलना (6) पट्टे बाजी करना (7) थाली पर मच्छी की तरह सर्र से निकलना (8) सपाटे से निकलना, मगर की तरह निकलना (9) साईकिल का पहिया फिराना (10) पाँवों से पट्टिया आगे-पीछे चलाना (11) बैठकें निकालना (12) बैठकर टांगें दौड़ाना (13) दोनों हाथों से तलवारें घुमाते आगपगे (आगे) पाछपगे (पीछे) चलना (14) छतरी लेकर चलना (15) छतरी घुमाते चलना (16) गधे को पीठ पर लाद रस्सी पार करना (17) उल्टे सिर रस्सी को पूरे शरीर से अड़का कर फांसी का फंदा बनाना।

अपने पुरखों के संबंध में गोरधन ने बताया कि चित्तौड़ की लड़ाई में लड़कर दला नाम का नट जयमलजी राठौड़ के

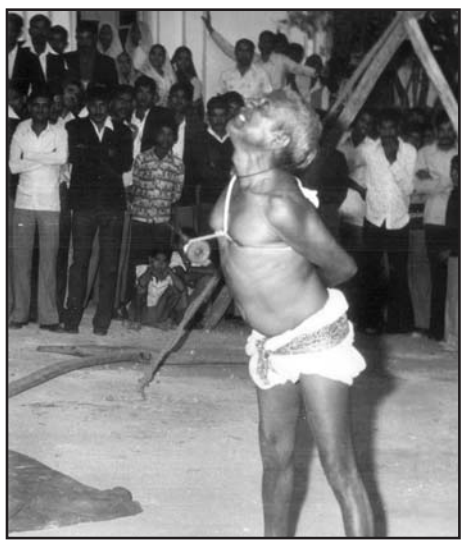

साथ बदनोर गया। इस दलजी का लड़का रूपोजी था। रूपोजी के भानाजी हुए। भानाजी का बेटा मैं खुद हूं। मैं बोला- मैं भी भानाजी का ही वंशज हूं पर वे भानाजी और थे। पांच पीढ़ी पहले हुए।

बात बढ़ाते गोरधन बोले- बदनोर में दलाजी की मेड़ी है। इस पर बनी उसने एक कीरताई सुनाई-

धम्म कीधो, पन्न कीधो, पन्न की बांधी मेड़ी।

म्हेल तो सांवलदानजी का, मेड़ी नट दला की।'

अर्थात् धर्म किया, पुण्य किया, पुण्य से मेड़ी बनाई। महल तो सांवलदानजी के कहलाये और मेड़ी दला नट के नाम से प्रसिद्ध हुई।

गोरधन ने कहा - 'अब हमारी कला को कोई नहीं पूछता। पेट भी नहीं भरता। कभी-कभी भारतीय लोककला मण्डल से, संगीत नाटक अकादमी से और सांस्कृतिक केन्द्र से बुलावा आता है पर उससे परिवार का गुजरबसर नहीं होता। समय बड़ा खराब आ गया है।'

'डेरे में कितने लोग होते हैं जो खेल करते हैं?' गोरधन बोला -'जैसा बुलावा आता है, वैसा ही डेरा बना लेता हूं। पैसे कम मिलें तो ज्यादा आदमी को कैसे ले जाऊं!' उसने अपने साथ के लोगों से मेरा एक-एक से परिचय कराया- 'यह मेरा लड़का हीरालाल। यह मेरा भतीजा वेणीराम और अमरचंद। यह मेरा जंवाई भंवरलाल और एक दूसरा भतीजा हीरालाल। इन सबको भी सीखा रहा हूं पर सीख-सीख कर किसको बतायेंगे। मेरी तो जिंदगी जैसे-तैसे पूरी हो जायेगी पर इनका क्या होगा!'

नटों का सारा खेल ढोलक की घाई-नचाई से बंधा रहता है। नाच के लिए जैसे घुंघरू जरूरी होते हैं, वैसे ही ढोलक के बिना नट की क्या पहचान! ढोलक बजाने में ही ये प्रवीण नहीं होते, बनाने में भी उस्ताद होते हैं।

शिखरजी पर्वत को बचाने की जैन समुदाय की अपील

उदयपुर। जैन समाज ने झारखंड के गिरीडीह जिले में स्थित शिखरजी पर्वत को बचाने के लिए झारखण्ड के मुख्यमंत्री से अपील की है।

सेव शिखरजी के पब्लिक रिलेशनस डायरेक्टर हेमंत एम शाह के अनुसार शिखरजी पर्वतश्रृंखला या पारसनाथ पर्वत के नाम से मशहूर इस पहाड़ी का आध्यात्मिक, सांस्कृतिक और धार्मिक इतिहास, आधुनिक इतिहास की शुरूआत से भी पुराना है। अंतर्राष्ट्रीय शोध विद्वानों को तो इस आध्यात्मिक पहाड़ी में से 12वीं शताब्दी से पुराने संस्कृत में शिलालेख होने के सबूत मिले है। 'सेव शिखरजी' मुहिम, भारत के उस राष्ट्रीय खजाने के आध्यात्मिक महत्व को उजागर करने वाला एक अभियान है, जहां चौबीस में से बीस जैन तीर्थकरों के साथ-साथ कई अन्य भिक्षुओं को हजारों साल पहले मोक्ष प्राप्त हुआ था। आज भी लोग पूरे पारसनाथ पहाड़ी की 27 किमी की परिक्रमा श्रद्धा के साथ करते है।

मधुबन के जंगलों में स्थित इस तीर्थ में लोग आध्यात्मिक जागरूकता का अनुभव कर सकारात्मक और शांतिपूर्ण जीवन जीना चाहते है, लेकिन दुर्भाग्य की बात है कि इन खूबसूरत जंगलों को भी उपेक्षित किया जा रहा है। इतना ही नही जंगलों का व्यावसायिक शोषण होने का जोखिम भी है।

सितम्बर 2015 में, झारखंड के मुख्यमंत्री रघुबर दास ने सार्वजनिक तौर पर घोषणा की थी कि वे शिखर को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आध्यात्मिकता और ज्ञान प्राप्ति के स्थान के तौर पर विकसित करेंगे।

इसके लिए उन्होने एक जैन प्रतिनिधिमंडल का स्वागत करते हुऐ, पहाड़ी की पवित्रता को सुरक्षित रखते हुए, उसकी संरचना के साथ छेडछाड़ किए बिना कुछ मूलभूत सुविधाएं प्रदान करने में दिलचस्पी दिखाई थी। तीन साल हो गये हैं, लेकिन मुख्यमंत्री रघुबर दास की घोषणाएं आज भी लाल फीताशाही और नौकरशाही में उलझी हुई है, जिसे राज्य सरकार की तरफ से कार्यान्वित करने के लिए कोई औपचारिक कार्रवाई नहीं हुई है।

पयोडर्मा गेंगरीनोसम का सफल उपचार

उदयपुर। पेसिफिक इंस्टीट्यूट ऑफ मेडीकल साइंसेंज (पीआईएमएस), उमरड़ा में चिकित्सकों ने पयोडर्मा गेंगरीनोसम नामक बीमारी का सफल उपचार किया है।

पीआईएमएस के चेयरमैन आशीष अग्रवाल ने बताया कि शंभूलाल गत 3 वर्षों से त्वचा की पीड़ादायक बीमारी पयोडर्मा गेंगरीनोसम से जूझ रहा था। कई मेडिकल कॉलेज एवं प्राइवेट चिकित्सकों को दिखाने के बाद भी उनकी बीमारी 30-40 प्रतिशत से ज्यादा ठीक नहीं हो पा रही थी। गत दिनों परिजन उसे लेकर पीआईएमएस आए और त्वचा रोग विशेषज्ञ डॉ. शिवांगी शर्मा को दिखाया। जांचों के बाद डॉ. शर्मा ने शंभूलाल का उपचार प्रारंभ किया। कई दिनों के उपचार के बाद अब मरीज सौ प्रतिशत ठीक हो गया है। उसके पैर में सूजन भी नहीं है एवं वह चल फिर सकता है।

कॉन्टैक्टलेस पेमेंट काड्र्स कैशलेस भारत बनाने में मददगार

उदयपुर। भारत में, कॉन्टैक्टलेस काड्र्स को बड़ी संख्या में अपनाने के लिए रास्ता बनाने के लिए वीसा जैसे पेमेंट कार्ड प्रदाता भी अपने इंफ्रास्ट्रक्चर को तेजी से अपग्रेड कर रहे हैं और परिणामस्वरूप ऐसे टच पॉइंट्स की संख्या में वृद्धि कर रहे हैं जो इस तरह की तकनीक को स्वीकार करते हैं।

टी. आर रामचंद्रन, ग्रुप कंट्री मैनेजर, इंडिया और साऊथ एशिया, वीसा ने बताया कि लोगों के पास डिजिटल पेमेंट प्रक्रियाओं में से चुनने के लिए ढेर सारे विकल्प हैं। इनमें से अधिकांश सिस्टम्स लोगों को झंझट से मुक्त भुगतान अनुभव देने में नाकाम रहने से लोग वापस नकद भुगतान की ओर रुख कर लेते हैं। ऐसे में भुगतान को महज एक टैप (कार्ड को मशीन पर छुआना) जितना आसान करके, जो कि न केवल झंझट से मुक्त है बल्कि बहुत तेज और सुरक्षित होने के साथ ही कैश के इस्तेमाल जितना ही सहज भी है, कॉन्टैक्टलेस काड्र्स ग्राहकों के बीच स्थायी रूप से जगह बना सकते हैं। इस प्रक्रिया को सक्षम बनाने के लिए वित्त मंत्रालय हाल ही में एक निर्देश लेकर आया है, जिसमें बैंकों को नियर-फील्ड कम्युनिकेशन (एनएफसी) सक्षम कॉन्टैक्टलेस क्रेडिट और डेबिट काड्र्स जारी करने की सलाह दी गई है। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, कॉन्टैक्टलेस पेमेंट काड्र्स यूजर को पीओएस (पॉइंट ऑफ़ सेल) टर्मिनल पर मात्र टैप करने भर से भुगतान करने की सुविधा देता है। इससे भुगतान करने की प्रक्रिया पहले से कहीं ज्यादा तेज हो जाती है, कॉन्टैक्टलेस कार्ड के साथ लेनदेन करने में तीन सेकेण्ड या इससे भी कम का समय लगता है जो कि इस प्रक्रिया लगने वाले समय को भी कम करता है और कस्टमर्स को तुरंत भुगतान का अनुभव भी देता है।

फूड डिलीवरी ऐप ऊबर ईट्स लॉन्च

उदयपुर। जयपुर और जोधपुर में सफल लॉन्च के बाद, दुनिया के सबसे बड़े फूड डिलीवरी नेटवर्क, ऊबर ईट्स ने उदयपुर में अपनी सेवाएं प्रारंभ कर दी हैं। लोगों को उनकी पसंद का खाना उपलब्ध कराते हुए ऊबर ईट्स शहर के ग्राहकों को विविध तरह के व्यंजनों का विकल्प देगा, जो उनके द्वार पर डिलीवर किए जाएंगे। इसके लिए उन्हें अपने मोबाईल फोन पर ऊबर ईट्स डाउनलोड करना होगा।

गौरव मलिक, एसोशिएट जनरल मैनेजर, ऊबर ईट्स ने कहा कि उदयपुर में ऊबर ईट्स के लिए अपार संभावनाएं हैं। इस शहर संपन्न संस्कृति, विरासत और फूड का बाहुल्य है। हमारा उद्देश्य ग्राहकों को घर बैठे खाना ऑर्डर की सुविधा प्रदान करना है। अगले कुछ हफ्तों तक हम ज्यादा रेस्टोरेंट्स जोड़ अपनी पहुंच का विस्तार करेंगे। ऊबर ईट्स उदयपुर में 10 रु. का डिलीवरी शुल्क लेगा। लॉन्च ऑफर के रूप में ऊबर ईट्स ग्राहकों को पहले दो ऊबर ईट्स ऑर्डर पर 75 रु. की छूट दे रहा है। उदयपुर में लॉन्च के लिए ऊबर ईट्स ने शहर के 100 से अधिक लोकप्रिय रेस्टोरेंट्स के साथ साझेदारी की है, जिनमें 1559 एडी, जगदीश मिष्ठान्न भंडार, खम्मा घानी, ज़ैड27 बाय कैफे लेक सिटी, ल केकरी, राजबाग आदि शामिल हैं। यह सेवा पूरे शहर के ग्राहकों को उपलब्ध होगी।

स्वच्छेबिल्टी रन में 4000 लोग और 45 स्कूलों की भागीदारी

उदयपुर। जेके सीमेंट स्वच्छेबिल्टी रन के तीसरे संस्करण में उदयपुर में धावकों ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। इसमें 4000 धावक, 45 स्कूलों के बच्चे और 110 दिव्यांग शामिल हुए। जेके सीमेंट स्वच्छेबिल्टी रन के इतिहास में किसी स्थान पर भाग लेने वाले धावकों की यह सबसे बड़ी संख्या थी। रन के बाद दिव्यांगों सहित अन्य प्रतिभागियों ने स्वच्छता अभियान संचालित किया।

जेके सीमेंट स्वच्छेबिल्टी रन करने का विचार कारगिल युद्ध में हिस्सा लेने वाले मेजर डीपी सिंह ने दिया। मेजर सिंह भारत के पहले ब्लेड रनर भी हैं और उनका नाम लिम्का बुक आफ रिकार्ड्स में भी दर्ज है। वे 18 से अधिक मैराथन दौड़ चुके हैं। इस रन का मुख्य उद्देश्य प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का स्वच्छ भारत अभियान और दिव्यांगों को समाज में बराबरी का स्थान दिलाना है।

जेके सीमेंट के स्पेशल एक्जीक्यूटिव राघवपत सिंहानिया ने कहा कि जेके सीमेंट स्वच्छेबिल्टी का तीसरा संस्करण अब तक का सबसे बड़ा संस्करण है। मेजर डीपी सिंह ने कहा कि रन के महत्व को देख और लोगों के द्वारा इसमें बढ़चढ़कर हिस्सा लेने से उत्साहित हैं। देशभर के दिव्यांगों में आत्मविश्वास लाने की बहुत जरूरत है। साथ ही समाज में उनके प्रति बदलाव लाने की जरूरत है। दिव्यांगों में छुपी क्षमताओं को सभी के सामने लाने की आवश्यकता है।

प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम आयोजित

उदयपुर। महाराणा प्रताप यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रिकल्चर एंड टेक्नोलॉजी के सहयोग से क्रॉप केयर फेडरेशन ऑफ इंडिया ने किसानों के लिए प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किया। क्रॉप केयर फेडरेशन ऑफ इंडिया देश की ऐसी 50 से भी अधिक कम्पनियों की सयुक्त संस्था है जो खाद, रसायन, बीज और जल प्रबंधन जैसी कृषि सम्बंधी चीजों के उत्पादन/प्रबंधन से जुड़ी हुई है जो छोटे और हासिए पर पहुंच चुके किसानों को शिक्षित करने के लिए कार्यक्रम आयोजित कर कृषि रसायनों के वाजिब और उपयुक्त इस्तेमाल के बारे में जागरूक कर रहा है। कार्यक्रम में इंसेक्टिसाइड इंडिया लिमिटेड, यूपिल व अन्य कृषि निर्माता प्रतिनिधिओं ने भी भाग लिया।

कार्यक्रम का उद्घाटन महाराणा प्रताप यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रिकल्चर एंड टेक्नोलॉजी के वाइस चांसलर प्रो. यूएस शर्मा ने किया। उन्होंने बताया कि अपनी कृषि और कृषि उत्पादन की बेहतरी के लिए यूनिवर्सिटी, सरकार और इंडस्ट्री द्वारा जारी दिशानिर्देशों का सख्ती से पालन करना चाहिए। डॉ. अनुरभ जोशी, डीन आरसीए, प्रो अजय के शर्मा, डीन सीटीएई, जेडीए महेश वर्मा ने किसानों को मौजूदा सरकारी योजनाओं की विस्तार से जानकारी दी।

स्वागत करते हुए सीसीएफआई की प्रमुख निर्मला पश्नावाल ने खाद्य व पोषण सुरक्षा को सुनिश्चित करने पर जोर दिया और कृषि क्षेत्र की समृद्धि के लिए कृषि संसाधनों के मामले में मेक इन इंडिया कार्यक्रम को बढ़ावा देने पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर कार्यक्रम में भाग लेकर प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले किसानों को सर्टिफिकेट के साथ सेफ्टी किट भी निशुल्क प्रदान की गई जिसमें हेडगियर, चश्मे, चेहरे पर लगाए जाने वाले मास्क, दस्ताने, ऐप्रन और टी-शर्ट शामिल थी। यह किट बार-बार इस्तेमाल की जा सकती है और यह किसी भी प्रकार की दुर्घटनात्मक हानि से बचाने में सक्षम है। कार्यक्रम में खेती करने वाले 6 केवीकेएस और आसपास के क्षेत्रों के 250 से अधिक किसान ने भाग लिया। सीसीएफआई के सलाहकार हरीश मेहता ने लाइव डेमोंस्ट्रेशन दिया।

कैस्ट्रॉल बाइक्स सुपर मैकेनिक का खिताब बैंगलौर को मिला

उदयपुर। कैस्ट्रॉल सुपर मैकेनिक कॉन्टेस्ट फॉर बाइक्स के फिनाले के विजेता बैंगलौर के रतन खंदा, जोसेफ पीटर राजाकुमार और रविश बने। रोमांचक फाइनल में देश के चौबीस मैकेनिकों ने एक-दूसरे को कड़ी टक्कर दी। विजेताओं को नवंबर में बैंकॉक में आयोजित होने वाले कैस्ट्रॉल एशिया पैसिफिक बाइक्स सुपर मैकेनिक कॉन्टेस्ट में भारत का प्रतिनिधित्व करने का अवसर मिलेगा।

कैस्ट्रॉल इंडिया में विपणन के वाइस प्रेसिडेन्ट केदार आप्टे ने कहा कि यह आयोजन छह माह लंबे चले कैस्ट्रॉल बाइक्स सुपर मैकेनिक कॉन्टेस्ट का समापन था, जिसमें प्रतियोगिता के विभिन्न चरणों में लगभग एक लाख मैकेनिकों ने प्रतिष्ठित चैम्पियंस टाइटल के लिये प्रतिस्पर्द्धा की। इस प्रतियोगिता में व्यक्तिगत और सामूहिक प्रशिक्षण सत्रों, टेक्निकल टिप्स और स्पेशल बूट कैम्प्स से मैकेनिकों की कुशलता निखरी। इस वर्ष की प्रतियोगिता में अनूठी बात थी 'कैस्ट्रॉल गैरेज गुरू' द सुपर मैकेनिक शो' की भागीदारी, जो कि टेलीविजन पर प्रसारित होने वाला एक कार्यक्रम है, जिस पर यह प्रतियोगिता भी दिखाई गई और प्रत्येक एपिसोड में देशभर से चयनित मैकेनिकों के साथ चैट शो और प्रशिक्षण सत्र हुआ।

छपते-छपते

मालती शर्मा नहीं रहीं

पूना की लोकसंस्कृतिविज्ञा श्रीमती मालती शर्मा का 13 अक्टूबर 2018 को निधन हो गया। पिछले लम्बे समय यों तो वह ठण्डीमण्डी ही चल रही थी पर अन्तिम आठ-दस दिन अधिक बीमार रहीं। निरन्तर सृजनरत रहने के कारण वह बीमारी को ही पराजित करती रहीं।

फोन पर वह अपने हालचाल बताती रहीं पर गम्भीर बीमार कभी नहीं बताया। प्रतिदिन ही वह अपने लेखन की टीप सुनातीं। 'एक दिन तो कहा भी कि इन दिनों कविताएं मेरे पीछे पड़ी हुई हैं। एक के बाद एक चार कविताएं लिख चुकी हूं। छोटी-छोटी हैं। सुना देती हूं।' कहकर चारों कविताएं सुनाईं। शब्द रंजन के लिए निरन्तर भेजती रहतीं।

मालतीजी की पहली कविता-पुस्तक 'निर्वासन की आंधी' उदयपुर से ही छपी। उनके सांस्कृतिक आलेखों से समृद्ध 'परम्परा का लोक' का सम्पादन भी मैंने किया। भारतीय लोककला मण्डल से प्रकाशित मेरे द्वारा सम्पादित मासिक 'रंगायन' में उन्होंने सर्वाधिक लेखन किया। मालतीजी ने साहित्य की सभी विधाओं में सृजन किया। उन्हें उनकी रचनाधर्मिता पर अनेक पुरस्कार एवं सम्मान मिले।

भोपाल के बसन्त निरगुणे ने कहा, मालती दीदी का एक बार जिससे भी मिलना हुआ सदैव के लिए उन्होंने उसे अपने विद्वतपूर्ण स्नेहिल व्यवहार से अपना बना लिया। वे हर समय न केवल अपनों की कुशलक्षेम पूछतीं अपितु लेखन के लिये भी प्रेरित किये रहतीं।

लखनऊ की डॉ. विद्याविन्दुसिंह ने लिखा कि मालती दीदी ने जिन विषयों पर अपनी गहरी पैठ से लिखा उन पर अन्यों ने नहीं के बराबर लिखा। अपने क्षेत्र में वह अन्यों से बेजोड़ अतुलनीय ही रहीं।

मनासा के डॉ. पूरन सहगल ने बताया, लोकसंस्कृति के क्षेत्र में पिछले छह दशक से मालती बहिन ने जिन विषयों पर जितना लिखा, अन्यों ने उतनी सूक्ष्म दृष्टि से आप भोगा लेखन नहीं किया। मुख्यत: महिला लेखिकाओं में वह एकमात्र एक ही लेखिका थी। उनका निधन लोकसंस्कृति के क्षेत्र की अपूरणीय क्षति है।

शब्द रंजन परिवार की उनके निधन पर नि:शब्द मौन श्रद्धांजलि। उनकी एक कविता इस प्रकार है-

गड़े मुर्दों को दफन ही रहने दो
इतिहास की, मजबूर बेजुबान धरोहर से
गड़े मुर्दे मत उखाड़ो।
कभी-कभी किसी की उम्र ही कोई अपना
होने की प्रतीक्षा में निकल जाती है
और कभी-कभी जो किसी को कोई मिलता भी है
वह मन के जैसा नहीं होता, कहां होता है ?
अपना कोई होने की
चाहत की व्यथा विश्वव्यापी है।
बीता वक्त किसी नाम की खोज के साथ
वापस नहीं आएगा।
सृष्टि के युग्मराग से
छूटे में क्या रहता, कौन साथ रहता है ?

गंगाभक्त स्वामी सानंद का बलिदान

-डॉ. वेदप्रताप वैदिक-

गंगाभक्त स्वामी सानंद (प्रो. जी.डी. अग्रवाल) का अनशन करते हुए निधन हो गया। वे 111 दिन से अनशन पर थे। उनकी आयु 86 वर्ष थी। उनके निधन को क्या कहें? बलिदान, मृत्यु या हत्या? उसे हरिद्वार के उनके साथी संन्यासियों ने हत्या ही कहा है।

यह बेहद दुखद घटना है। जब मैं 8 जुलाई को उनसे मिला था तो उन्होंने मुझसे कहा था कि उन्होंने मोदी को दो पत्र लिखे हैं लेकिन उनका कोई जवाब नहीं आया। उन्होंने मुझसे कहा कि मैं मोदी से बात करुं। मैंने अपनी असमर्थता जताई लेकिन दिल्ली लौटकर मैंने तुरंत केंद्रीय मंत्री नितीन गडकरी से बात की और बाद में राष्ट्रपति श्री रामनाथ कोविंद से भी! दोनों ने चिंता जताई।

गडकरी ने अपने मंत्रालय के अफसरों को स्वामी सानंदजी से बात करने के लिए हरिद्वार भी भेजा। बाद में नितीनजी ने मुझे बताया कि उनकी लगभग सभी मांगे वे मानने को तैयार हैं। यदि स्वामीजी दिल्ली आ जाएं तो उनके साथ विस्तार से बात करके उनकी अन्य मांगों का भी हल निकाल लेंगे। स्वामीजी से 15-20 दिन पहले तक मेरा संपर्क बना हुआ था। वे इस बात पर अड़े हुए थे कि मैं नरेंद्र मोदी को उनसे मिलने हरिद्वार जाने के लिए कहूं। पता नहीं क्यों, उन्होंने मोदी के बारे में गलतफहमी पाल रखी थी। उनकी हालत बहुत खराब हुई तो अस्पताल ले जाकर उनका इलाज किया गया और वे दिल्ली आने को भी तैयार हो गए लेकिन उन्हें रास्ते में हृदयाघात हो गया। उनकी मांग यह थी कि गंगा पर बन रहे बड़े बांध और अवैध खनन को रोका जाए। गंगा को अविरल और स्वच्छ रखा जाए।

उन्होंने पांच साल पहले रुद्रप्रयाग में इन्हीं मुद्दों को लेकर अनशन किया था। तब जल-पुरुष राजेंद्रसिंह और मुझे पुलिस ने वहां गिरफ्तार कर लिया था। स्वामी सानंदजी ने अमेरिका से पीएच.डी. की थी। वे इंजीनियरी के प्रोफेसर थे। उनके जैसे अनासक्त और सर्वहितकारी आंदोलनकारी देश में कितने हुए हैं? उनके अनशन के पीछे पद, प्रतिष्ठा, पैसे, प्रभुत्व आदि की कोई इच्छा नहीं थी।

वे शुद्ध गंगाभक्त थे। ऐसे गंगाभक्त का अनशन करते हुए निधन हो जाए और सरकार अपने आप को राष्ट्रवादी कहे, इससे बढ़कर सत्य का अपमान क्या होगा? स्वामी सानंदजी की मृत्यु हमारे देश के खबरतंत्र के मुंह पर भी करारा तमाचा है, जिसने उनके अनशन पर ठीक से ध्यान नहीं दिया। उनके पहले स्वामी निगमानंद और अब स्वामी सानंद का बलिदान तब तक याद किया जाएगा, जब तक इस देश में गंगा बहती रहेगी। मेरी हार्दिक श्रद्धांजलि!

लखनऊ राजभवन में 25 सितम्बर को इन्दु प्रकाश की लिखित पुस्तक 'फिर-फिर अधीर' का विमोचन करते डॉ. विद्याविंदुसिंह, इंदुप्रकाश ऐरन, राज्यपाल राम नाईक तथा डॉ. रीता बहुगुणा

डॉ. महेन्द्र भानावत का महत्वपूर्ण साहित्य

डॉ. महेन्द्र भानावत की करीब 100 पुस्तकें प्रकाशित हैं। उनमें से बहुत अप्राप्य हैं। उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित अभिनंदन ग्रंथ 'लोक मनस्वी' प्रकाशन प्रक्रिया में है। उनकी लिखित कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकें इस प्रकार हैं-

पुस्तक का नाम	मूल्य
भारतीय लोकनाट्य	1500/
परंपरा का लोक	475/
आदिवासी लोक	350/-
जनजाति जीवन और संस्कृति	295/-
महाराष्ट्र के लोकनृत्य	200/-
आदिवासी जीवनधारा	395/-
जनजातियों के धार्मिक सरोकार	150/-
राजस्थान के लोकनृत्य	200/-
गुजरात के लोकनृत्य	200/-
राजस्थान के लोक देवी देवता-	150/-
भारतीय लोकमाध्यम	75/-
अजूबा भारत	200/-
पाबूजी की पड़	50/-
लोककलाओं का आजादीकरण	250/-
उदयपुर के आदिवासी	250/-
निर्भय मीरां	250/-
रंग रूड़ो राजस्थान	100/-
कुंवारे देश के आदिवासी	100/-
जन्हें मैं जानता हूं	100/-
जैन लोक का पारदर्शी मन	150/
गवरी	60/

हमारे पास शब्द रंजन है आपके पास और भी बहुत कुछ कृपया सहयोग करें

संरक्षक	11000/
विशिष्ट सदस्य	5000/
आजीवन सदस्य	3000/
शब्दरंजन के सहयात्री	1000/
साहित्यिक चौपाल	500/
वार्षिक संस्थागत	300/
वार्षिक व्यक्तिगत	250/

शब्दरंजन में विज्ञापन सहयोग कर अपने इस पत्र को और अधिक रंगदार, रूपवान तथा समाज विकास का अग्रणी प्रतिनिधि पत्र बनायें।

(**Shabd Ranjan**, UCO BANK, Bhupalpura Branch, Udaipur, a/c no. 18450210000908, IFSC no. UCBA0001845, a/c type- Current a/c)

कृपया रचनाएं व समाचार ई-मेल से भेजें तो सुविधाजनक शीघ्र प्राप्त होंगी।

shabdranjanudr@gmail.com

डीएचएल एक्सप्रेस द्वारा दरें बढ़ाने की घोषणा

उदयपुर। डीएचएल एक्सप्रेस ने वार्षिक कीमतों में वृद्धि की घोषणा की है। यह बढ़ी हुई कीमतें 1 जनवरी 2019 से प्रभावी होंगी। 2018 की तुलना में, भारत में शिपमेंट की कीमतों में औसत बढ़ोतरी 6.9 प्रतिशत होगी। डीएचएल एक्सप्रेस इंडिया के कंट्री मैनेजर आरएस सुब्रमण्यिन ने कहा कि डीएचएल एक्सप्रेस उच्चतम उम्मीदों को पूरा करने और वैश्विक स्तर पर ग्राहकों को बेहतर सेवा प्रदान करने के लिए अपने अंतर्राष्ट्रीय नेटवर्क में महत्वपूर्ण निवेश कर रही है। हमारा लक्ष्य है कि हम अपने ग्राहकों की जरूरतों को पूरा करने के लिए गुणवत्ता में निरंतर सुधार करें। वार्षिक मूल्य समायोजन हमें अभिनव प्रौद्योगिकियों और व्यक्तिगत वितरण प्रक्रियाओं का उपयोग कर सर्वोत्तम श्रेणी के ग्राहक समाधान सुनिश्चित करने, अपने बुनियादी ढांचे को और मजबूत करने की अनुमति देता है। विशेष रूप से पिछले कुछ हफ्तों और महीनों में, हमने कई बाजारों में अपने हब विस्तार और नए गेटवे में निवेश करने पर ध्यान केंद्रित किया है। इस प्रकार प्रति घंटे अपनी शिपमेंट प्रोसेसिंग क्षमताओं को बढ़ाया है और पारगमन के समय को कम किया है। हम हमेशा अपने क्षेत्रीय और अंतरमहाद्वीपीय हवाई बेड़े को अपग्रेड करने पर काम कर रहे हैं, हम स्वचालित सॉर्टिंग प्रौद्योगिकियों के साथ नई सुविधाएं खोल रहे हैं और दुनिया भर में अपने ग्राहकों के लिए अभिनव ई-कॉमर्स सेवा समाधान प्रस्तुत कर रहे हैं। डीएचएल एक्सप्रेस में, हम अपने ग्राहकों, भागीदारों और परिवहन प्राधिकरणों की आवश्यकताओं का अनुपालन करने के लिए उच्चतम सुरक्षा और स्थायित्व मानकों को आश्वस्त करने के लिए जो कुछ भी कर सकते हैं, करेंगे। डीएचएल एक्सप्रेस द्वारा उन सभी 220 देशों एवं क्षेत्रों में जहां कंपनी सेवायें प्रदान करती है, मुद्रास्फीसति, मुद्रा गतिशीलता और अन्यो बढ़ती लागत जैसे कि परिष्कृत सुरक्षा नियमों के साथ अनुपालन से संबंधित अतिरिक्तत खर्चों के मद्देनजर कीमतों में सालाना बदलाव किया जाता है।

संस्कृति के संरक्षण हेतु मालू सम्मानित

राजस्थान की लोकसंस्कृति में महत्वपूर्ण योगदान देने के लिए वीणा समूह के अध्यक्ष के.सी. मालू को सम्मानित किया गया। वीणा म्यूजिक के माध्यम से मालू ने लुप्त प्राय: राजस्थानी गीत-संगीत को देश में नहीं बल्कि विदेशों में भी लोकप्रिय बनाने के लिए निरन्तर प्रयास किये हैं। उन्हीं के प्रयासों से ही 'घूमर' 'पल्लो लटके' जैसे गीत हिन्दी फिल्मों में भी समावेश किए जा रहे हैं। केन्द्रीय राज्यमंत्री अर्जुनराम मेघवाल ने मालू द्वारा किए जा रहे कार्यों की सराहना की।

देवनारायण पड़ की पहचान

- नटवर त्रिपाठी -

लोकजीवन में भोपे तीन प्रकार के होते हैं। मंदिर भोपे, जमात भोपे और फड़ भोपे। मंदिर भोपा धार्मिक व्यक्ति होता है जो मंदिर में पूजा-अर्चना को अंजाम देता है और लोगों को कई बार चिकित्सकीय परामर्श देता है। इन मंदिरों में भोपों को भाव आते हैं। इनमें पूर्वजों या देवत्व की आत्मा जागृत होती है। भोपा के अशक्त हो जाने पर उसका चेला काम संभालता है। जमात भोपा गूजर जाति में से होता है। जमात के लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते हैं और गूजर जाति के ही लोग अपनी दूसरी या तीसरी संतान को जमात में दे देते हैं। सवाईभोज जैसे मंदिरों के महन्त ऐसे ही जमात से आते हैं।

फड़ भोपों में एक पाटवी और दूसरा दिवटिया कहलाता है। ये गूजरों के अलावा राजपूत, कुम्हार, बलाई जाति में होते हैं। यह प्रथा वंशानुगत नहीं है। फड़ सीखने वाले चेले को सीखधर बोलते हैं। नारियल भेंट देकर गुरु बनाया जाता है। सीखने वाले के सिर पर हाथ रख कर भोपा स्वीकृति जतलाता है। सीखधर फड़ गान, नृत्य तकनीक तथा पूजा-आरती सीखता है। पहले दौर में गुरु द्वारा प्रदर्शित गान को देखता है। दूसरे दौर में भोपा के साथ गान सीखता है। तीसरे दौर में कीर्तन मण्डल अथवा देवजी के मंदिर में जन्तर पर गाना सीखता है। चौथे दौर में गुरु गान में साथी दीवटिया का काम करने लगता है। साथ-साथ नृत्य व गान में भागीदारी करता है। पांचवे दौर में गुरु के समान फड़ गान का प्रदर्शन करता है। जब वह भोपा द्वारा मान्य हो जाता है तो उसे पूर्ण भोपा मान लिया जाता है। पूरी तरह संतुष्ट हो जाने पर भोपा उसे फड़ बनवाने या क्रय करने के लिए अधिकृत कर देता है।

भोपा फड़ के सम्मुख जन्तर को हाथ से बजाते बगड़ावत गाथा रात्रि के पहले प्रहर से अंतिम प्रहर तक गाता है। विशेष अवसर पर 3-4 दिन भी गान होता है। फड़ न दिन में खुलती है और न ही दिन में गान होता है। जहां वह अपनी मर्जी से जाता है तो पांच रूपया और नारियल ही पूजा-पाठ पर लेता है। किसी के बुलावे पर सवा ग्यारह सौ रूपया व नारियल लेता है। वह राशि देवनारायण मंदिर या धार्मिक अनुष्ठान में ही लगती है। फड़ बांचने के लिए 150-200 किलोमीटर दायरे में ही जाते हैं। उसकी प्राथमिकता कृषि-कर्म है। पूजा-अर्चना और शंख-ध्वनि से फड़ खुलती है। आरती के बाद ही फड़ को समेटा जाता है। फड़ को महिलाओं से 20 फीट दूर रखते हैं। प्रलोभन में आकर देवतुल्य फड़ को नहीं बेचते हैं। पुरानी हो जाने पर पुष्कर के तालाब में पदराते हैं। जोशी-चितेरे को बहुत आदर देते हैं।

फड़ के आगे मुख्य भोपे के पीछे टीपरिये में तेल-बाट लिए दीवटिया बात को दोहराता है। वह अपने आंगिक हावभाव तथा ऊंची-नीची राग द्वारा पूरी रात को जीवन्त बनाये रखता है। मुख्य भोपा मोरपंख से बने चण्टिये से चित्रों को इंगित करता है। फड़ अधिकतर शादी-विवाह, मनौती और खुशी के अवसर पर बंचवाई जाती है।

रतनपुरा के देवकिशन भोपा के परिवार में सात पीढ़ी से फड़ बंच रही है। प्रत्येक बड़े बेटे को बगड़ावत गाथा कंठस्थ है। अधिकतर वे ही भोपे देवनारायण की फड़ बांचते हैं जिनके घर पीढ़ियों से फड़ बंचती आई है। ये प्रात: 8, दोपहर 2 और सायं 6 बजे देवनारायण मंदिर की भी सेवा करते हैं। अधिकतर भोपा-समुदाय खेती-बाड़ी और पशुपालन से जुड़े हुए हैं। अधिकतर भोपे अशिक्षित हैं परन्तु कइयों को समूची गाथा कंठस्थ है।

ये मांस-मदिरा का सेवन नहीं करते और यथासमय खान-पान तथा रहन-सहन में चतुराई रखते हैं। अपने समाज में इनका सम्मान रहता है। कई भोपे झाड़ा-फूंका भी करते हैं और कामनापूर्ति के लिए देवनारायण की पाती देते हैं। देवनारायण के मंदिरों में मुख्यत: देवनारायण की इंटें होती हैं। प्रतिमाओं की तुलना में प्रमुखता इंटों की है। कई गुर्जर अपने घरों की चुणाई इंटों से नहीं करते। देवनारायण के किसी मंदिर की चुणाई इंटों से नहीं मिलेगी। ऐसे गुर्जरों के गांवों में छतों पर कवेलू ही रहते हैं। मंदिरों में इंटें पुष्कर के पास नाग पहाड़ से लाई जाती हैं। जितनी इंटें मंदिर में देवस्वरूप स्थापित करनी हैं उतनी ही पहाड़ के किसी एक स्थान से खोदकर ली जाती हैं। गुर्जर लोग अब भी मकानों में मालिया नहीं बनाते। सप्तमी के दिन मजदूरी पर नहीं जाते। अगता रखते हैं। फड़ को भागवत समझ कर बांचते हैं।

93 वर्षीय देवकिशनजी ने बताया कि प्रत्येक शनिवार देवजी की खास पूजा होती है परंतु माघ शुक्ला की सप्तमी को देवनारायणजी के जन्मदिन पर तथा भादवी छठ को खास उत्सव-जागरण होता है। इसमें आसपास के गांवों के गूजर स्त्री-पुरुष भाग लेते हैं। सामूहिक कथा होती है। देवनारायणजी को नई पोशाक धारण कराई जाती है। भजव-भाव सम्पूर्ण रात्रि चलते हैं।

किंचित बदलाव तथा अधिक मनोरंजक ढंग से गाने के कारण फड़ का स्थान चीमटे ने ले लिया। अब ढोलक के साथ मजीरे व चीमटे की सहायता से गाथागान करने लगे हैं। चीमटा 32 ताल का होता है। इसकी रपटन पर तालियां लगी रहती हैं। जिस गांव में प्रस्तुति देनी होती है वहां सबसे पहले देवताओं को सिर नवाते हैं। कथा प्रांरभ करने से पूर्व गणपति वंदना करते हैं। सभी देवताओं का आह्वान करते हैं। अधिकतर एक रात्रि का ही कार्यक्रम रात्रि जागरण के दिन होता है परन्तु कहीं-कहीं तीन-तीन दिन तक कथा जारी रहती है। ऐसे में पूर्ण कथा के स्थान पर एक-दो कड़ियां ही पूरी कर पाते हैं। देवनारायण की जलमपत्री गाने का रिवाज है।

जन्तर तीन तार वाला एक वाद्य यंत्र है जो भोपा समुदाय का स्वनिर्मित होता है। इसका एक नाम दीपणा भी है। इसके दो तार ही काम आते हैं। पहला तार नर और दूसरा नारी का रूप माना जाता है। कहीं-कहीं जन्तर में चार तार भी देखने को मिलते हैं। तीसरा तार धुन बजाने के काम आता है। जन्तर में 130 सेमी. लंबे खोखले बांस की नाल के दोनों सिरों पर 45 सेमी. के तुम्बे बांधे जाते हैं। एक बड़ा नर और छोटा नारी कहलाता है। तीन तारों को रागन, जारो और अंगूठीवाला कहते हैं। रागन से सम पहली मीठी आवाज निकलती है। जारो से झेला-धोरना, सुर को उभार देती है तथा अंगूठीवाला तार उतरनी, राग में काम आता है। तीनों तार एक हिस्से पर लोहे की किलियां (कांटा) तथा दूसरे हिस्से पर लकड़ी की खूंटियां नाल लगी रहती हैं। घूमने वाली खूंटी को मोडानी, दूसरी दो खूंटियों को चढ़ो-उतरो मोडना कहते हैं। खूंटियां तारों के खींचाव व ध्वनि के उतार-चढ़ाव के काम आती हैं।

जन्तर में 14 स्यार लगी रहती हैं जो मोम की बनी होती हैं। आजकल एमसिल का प्रयोग होता है जो प्राय: मोटरपार्ट्स की दुकान पर मिलता है। भीलवाड़ा की ओर स्यार को गुंवा बोलते हैं। बीच में नारेली रहती है। पहले सल्लो, जानवर की पापड़ी लगाते थे पर अब यह नहीं मिलती है। बांस के ऊपर के हिस्से पर करी लगती है जो शीशम, रोहेड़ा लकड़ी की बनी होती है। दायें हाथ पर जो अंगूठा और अंगुलियां रहती हैं उनसे राग निकलती है। बायें हाथ से पकड़ने वाले बांस के हिस्से को मोरणी बोलते हैं। बांस के ऊपरी हिस्से के थोड़ा नीचे आरपार चार छेद होते हैं। तुम्बे में गोल बड़ा हिस्सा गोलाई में कटा रहता है और उसमें नारियल का गोल टुकड़ा तांत से बांध कर रखते हैं। गले में जंतर जिस रस्सी से लटकाते हैं उसे गालो बोलते हैं।

जन्तर बजाते समय लूर, ठुमरी, चोबकलिया, चैक, गाथा, कविता आदि डिंगल राग में गाते हैं। शब्द को बहुत ऊंचा और फिर धीरे-धीरे नीचे गाने को बढ़ाव की कड़ी बोलते हैं। आधा चैक मुख्य भोपा और शेष दीवटिया बोलता है और आगे-आगे मुख्य भोपा और पीछे दीवटिये चलता है।

देवनारायणजी की स्तुति गान कर जन्तर जागृत किया जाता है। हर दिन कम से कम पांच भजन भोपा को रोज गाने ही होते हैं। यह यंत्र केवल देवनारायण के भजनों के लिए ही प्रयुक्त होता है। इसे घर या मंदिरों में ऊंची दीवार पर टांग दिया जाता है। इसे सर्दी, गर्मी और धूप से बचाये रखना पड़ता है। जन्तर के पुराने हो जाने या खराबी आ जोने, टूट-फूट हो जाने पर पुष्कर के घाट जाकर विधिपूर्वक विसर्जन करना पड़ता है। कहा जाता है कि 'सौ मन्तर बराबर एक जन्तर' अर्थात् जन्तर का महत्व सौ मंत्रों से अधिक माना गया है।

इसकी आकृति वीणा से मिलती है। उसी के समान इसमें दो तुम्बे होते हैं। इसकी डांड बांस की होती है जिस पर पशु की खाल के बने 22 पर्दे मोम से चिपकाये जाते हैं। कभी-कभी ये मगर की खाल के भी होते हैं। परदों के ऊपर 5-6 ताल लगे होते हैं तथा तरबें भी होती हैं। तारों को हाथ की ऊंगली और अंगूठे के आधार से आधात करके बजाया जाता है

देवनारायण की फड़ देव उठने से लेकर देव सोने के समय गाई जाती है। अन्य सभी देवताओं की फड़ पूरे समय तक गाई जाती है। जिस तरह पूर्णिमा के अवसर पर सत्यनारायण की कथा बांची जाती है उसी तरह पाबूजी, तेजाजी, रामदेवजी आदि की फड़ें बांची जाती हैं।

गोठा से तात्पर्य गांव से है। वे गांव जो बगड़ावत गाथा से संबंधित हैं। कई जगह भोपा जन्तर के बिना भी गान करता है। उसे गोठागान कहते हैं। ऐसे गोठागान करने वाले भोपे केंकड़ी और शाहपुरा के पास अधिकतर मिल जाते हैं। चौमासे में ये बैठकर या खड़े-खड़े बिना फड़ के गाथा का गान करते हैं। प्राय: देव मंदिरों में ये बैठकर गोठागान करते हैं। गायक के सिर पर लाल रंग का साफा होता है जिस पर सफेद गोटा लपेटा रहता है। साफे पर सैली बंधी रहती है। सैली देवनारायण की राणी नागकन्या मानी जाती है। लाल रंग के वागे पर सफेद रंग के तिकोने कंगारे लगे रहते हैं। लाल रंग की ही बगतरी रहती है। उस पर भी वागा की तरह सफेद तिकोने कंगारे लगे रहते हैं। बगतरी पर बनात रहती है जिसे पीपलदे की निशानी मानी जाती है। पैरों में कांसे के 20-20 घूघरे बंधे रहते हैं।

पड़ में बगड़ावतों की संपूर्ण कथा वर्णित न होकर देवनारायण द्वारा अपने पिता आदि के बैर-शोधन के प्रसंग को उद्घाटित कर उनके चरित्र को उभारा जाता है। देवनारायण की फड़ में लगभग 55 स्थानों के 160 दृश्य रहते हैं। कथा के एक भाग में 24 भाइयों का रेखांकन तथा उनके भगवान शिव से हांसिल राजसी ठाटबाट तथा दूसरे भाग में विष्णु के अवतार देवनारायण की लीला का दिग्दर्शन रहता है।

अलख नयन मंदिर के प्रयासों से झाड़ोल तहसील के 15 गांव अंधता मुक्त

उदयपुर। अलख नयन नेत्र चिकित्सालय द्वारा झाड़ोल में विश्व दृष्टि दिवस पर विशिष्ट समारोह का आयोजन किया गया। इसमें प्रथम चरण में अलख नयन के प्रयासों से झाड़ोल तहसील के 15 गांव पूर्णतया अंधता मुक्त हुए उनकी विधिवत घोषणा की गई। मुख्य अतिथि भाजपा देहात जिलाध्यक्ष गुणवंतसिंह झाला, लोक सीएमएचओ डॉ. धर्मेन्द्र गरासिया, अलख नयन आई इंस्टीट्यूट के मेडीकल डायरेक्टर डॉ. एल. एस. झाला, मेनेजिंग ट्रस्टी डॉ. लक्ष्मी झाला एवं एक्जीक्यूटिव ट्रस्टी मीनाक्षी चूंडावत थे।

डॉ. एल. एस. झाला ने स्वागत करते हुए कहा कि अंधता निवारण के लिए झाड़ोल का चयन कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। प्रथम तो आदिवासी क्षेत्र है जहां के निवासी अपेक्षाकृत बहुत पिछड़े हैं। दूसरा कारण वे स्वयं यहीं के हैं इसलिए अपने क्षेत्र और अभावग्रस्त लोगों के प्रति उनकी सहज सहानुभूति रही है। गुणवंतसिंह झाला ने कहा कि हर व्यक्ति जिस क्षेत्र का है, वह उसी क्षेत्र में काम करे यह महत्वपूर्ण बात है। डॉ. धर्मेन्द्र गरासिया ने कहा कि झाड़ोल ब्लॉक में 283 गांव आते हैं। इनमें से अलख नयन ने प्रथम चरण में 109 गांवों की सुध लेते हुए 15 गांवों को पूर्णतया अंधता से मुक्त करने में अपनी महत्वपूर्ण भागीदारी निभाई है। आवश्यकता है शेष बचे गांवों को भी अंधता मुक्त करने का। मीनाक्षी चूंडावत ने प्रोजेक्ट कोर्डिनेटर कैलाश गायरी और उनकी टीम को सम्मानित किया। डॉ. लक्ष्मी झाला ने बताया कि जो गांव अंधता से मुक्त हुए हैं उनमें जोलागढ़, बूझा, छातरड़ी, सरणा, नागमाला, गणेशपुरा, मालवण, बेरना, रणजीतपुरा, देवीनबारा, धामनी, नामली, पीपली मगरी, बोरिया, दमाणा हैं।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।